चौथी दुनिया

हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

www.chauthiduniya.com

हक़ीक़त की अनदेखी

पेज-5

भारत में ओबामा

पेज-11

साई की महिमा

पेज-12

सिंपली द बेस्ट

पेज-15

मूल्य 5 रुपये

दिल्ली, 01 नवंबर-07 नवंबर 2010

पचास हज़ार बच्चों की मौत का ज़िम्मेदार कौन?

उत्तर भारत इन दिनों एक रहस्यमय ज्वर की चपेट में है, जो ख़ास तौर पर मासूम बच्चों की जान ले रहा है. यहां औसतन सौ बच्चे रोज़ मर रहे हैं. जो बच रहे हैं, वे जीने लायक़ नहीं रहते. कौन ज़िम्मेदार है इस भारी तबाही के लिए? कहीं यह देश की नई फ़सल बर्बाद करने की कोई साज़िश तो नहीं? पूर्वी उत्तर प्रदेश में फैली इस महामारी की चिंता न राज्य सरकार को है और न केंद्र सरकार को.

» इंसेफ्लाइटिस की वजह से तीन दशकों में पूर्वी उत्तर प्रदेश में 50 हज़ार बच्चे मर चुके हैं. बच्चे विकलांग हो गए और यह सिलसिला लगातार जारी है.

» स्वास्थ्य विभाग गंदगी-मच्छर को इसकी वजह बताता है. ऐसा है तो यह रोग पूरे भारत में क्यों नहीं फैल रहा? ख़ास इलाक़े में ही बार-बार इसका प्रकोप क्यों हो रहा?

» लोग इलाज के लिए आते हैं और अपने बच्चों की लाशें लेकर जाते हैं. अदालत के आदेशों की भी उपेक्षा हो रही है. देश का बचपन असमय मौत का शिकार हो रहा है.

प्रभात रंजन दीन

उत्तर भारत में फैल रहा अनजाना ज्वर कहीं जैव आतंकवाद का परिणाम तो नहीं? पूर्वी उत्तर प्रदेश, उत्तर पश्चिमी बिहार और इससे सटे नेपाल के तराई इलाक़े में मस्तिष्क ज्वर से रोज़ हो रही औसतन सौ बच्चों की मौत की आख़िर वजह क्या है? पूर्वी उत्तर प्रदेश के पिछड़े ज़िले कहीं जैव आतंकवाद के प्रयोग स्थल और यहां के लोग कहीं गिनी-पिग तो नहीं बनाए जा रहे? इन सवालों से पूरे देश, ख़ास तौर पर उत्तर भारत के लोग आक्रांत हैं, लेकिन जवाब देने या ज़िम्मेदारी लेने के लिए कोई राजी नहीं है...न राज्य सरकार और न केंद्र सरकार.

पूर्वी उत्तर प्रदेश के गोरखपुर, कुशीनगर, देवरिया एवं संत कबीर नगर समेत आठ ज़िलों में जापानी इंसेफ्लाइटिस महामारी की तरह फैल गया है, जिसका शिकार अधिकतर बच्चे हो रहे हैं. बिहार के छपरा, सीवान और गोपालगंज जैसे सीमावर्ती ज़िलों में भी यह रोग फैला हुआ है. पूर्वी उत्तर प्रदेश में हालत अत्यंत गंभीर है. केंद्र और राज्य सरकार, दोनों ही यह मानने को तैयार नहीं हैं कि यह बीमारी जापानी इंसेफ्लाइटिस है. बच्चे अंधाधुंध मर रहे हैं, पर बीमारी को नकारने की सरकारी कोशिशें जारी हैं. आंकड़े दबाए जा रहे हैं और मरने वालों की संख्या ग़लत बताई जा रही है. पिछले तीन दशकों में केवल पूर्वी उत्तर प्रदेश में ही 50 हज़ार बच्चे मर चुके हैं. इससे अधिक बच्चे विकलांग हो गए, नस्लें ख़राब हो रही हैं और यह घातक सिलसिला लगातार जारी है. हर रोज़ औसतन सौ बच्चे मर रहे हैं, लेकिन सरकार कहती है कि इस साल अब तक 219 बच्चे ही मरे हैं. आप आंकड़े देखें तो हैरत में पड़ जाएंगे, 2005 में अकेले गोरखपुर के बीआरडी मेडिकल कॉलेज में 15 सौ बच्चे मरे थे. आख़िर सरकार बच्चों की बेतहाशा हो रही मौतों को स्वीकार क्यों नहीं करती और इसके बरक्स फ़र्ज़ी आंकड़े क्यों गढ़ रही है? सरकारी आंकड़े कहते हैं कि 20 वर्षों में 6500 से अधिक बच्चे मरे. जबकि इस दरम्यान अकेले गोरखपुर स्थित बीआरडी मेडिकल कॉलेज अस्पताल में ही 8500 बच्चों की मौत हुई. झूठ की बुनियाद पर गढ़ा गया यह सरकारी आंकड़ा भी कितना भयावह है यह देखिए. आधिकारिक तौर पर 1978 में इस बीमारी से मरने वाले बच्चों की संख्या 1072 थी, जो 2005 में डेढ़ हज़ार के ऊपर पहुंच गई. यह संख्या क्रमशः बढ़ती ही गई है, तबसे लेकर आज वर्ष 2010 तक यदि बीआरडी मेडिकल कॉलेज अस्पताल के अलावा अन्य अस्पतालों और छोटे-बड़े नर्सिंग होमों में हुई मौतों का हिसाब किया जाए तो मरने वाले बच्चों का आंकड़ा भयावह होगा. लंदन स्थित हेल्थ प्रोटेक्शन एजेंसी सेंटर की रिपोर्ट भारत सरकार और उत्तर प्रदेश सरकार के फ़र्ज़ी आंकड़ों पर तमाचे की तरह है. सेंटर की रिपोर्ट कहती है कि जुलाई 2005 से लेकर अब तक यानी महज़ पांच साल में उत्तरी भारत (पूर्वी उत्तर प्रदेश) और इससे सटे नेपाल के तराई इलाक़े में जापानी इंसेफ्लाइटिस से पांच हज़ार लोगों की मौत हो चुकी है. एक लाख से अधिक लोग इससे आक्रांत हुए हैं. तथ्य यह है कि इस साल यानी 2010 में जनवरी से लेकर सितंबर के दरम्यान अकेले गोरखपुर बीआरडी मेडिकल कॉलेज अस्पताल में ही 338 बच्चे जापानी इंसेफ्लाइटिस की चपेट में आकर मारे गए. पूर्वी उत्तर प्रदेश के अन्य प्रभावित ज़िलों या बिहार के प्रभावित ज़िलों में मरने वालों की तादाद के बारे में तो सिर्फ़ कल्पना की जा सकती है.

केंद्र और प्रदेश, दोनों सरकारों का उपेक्षात्मक रवैया आपराधिक है. इसी वजह से लोगों की जानें जा रही हैं, वे विकलांग हो रहे हैं और नस्लें ख़राब हो रही हैं. पूर्वी उत्तर प्रदेश और उत्तर-पश्चिमी बिहार इस बीमारी से ज़बरदस्त प्रभावित है, लेकिन कोई सुनने वाला नहीं. 2007 में पहली बार टीकाकरण की व्यवस्था की गई, वह भी स्वास्थ्य अधिकारियों के भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ गई. यहां तक कि वायरस की जांच भी पुणे में होती थी और वहां से रिपोर्ट कभी आती ही नहीं थी. संसद से सड़क तक काफ़ी शोर मचने के बाद गोरखपुर में राष्ट्रीय विषाणु शोध संस्थान की स्थापना तो हुई, लेकिन केंद्र ने जो साढ़े पांच करोड़ रुपये दिए, उन्हें राज्य सरकार ने भेजा ही नहीं. आबादी के मुताबिक़ केवल पूर्वी उत्तर प्रदेश में एक करोड़ टीके की ज़रूरत है. यहां टीका लगना था तीन बार, लेकिन लगाया गया एक बार. बाक़ी स्वास्थ्य विभाग खा गया. जो टीका मार्च महीने में लगाया जाना था, वह मई-जून में लगाया गया. 18 लाख टीके वापस भेज दिए गए. जो टीके लगाए गए, वह भी एक्सपायरी थे या भद्दे रखरखाव के कारण बेकार हो चुके थे. बीआरडी मेडिकल कॉलेज के बाल रोग विशेषज्ञ प्रो. के पी कुशवाहा कहते हैं कि जापानी इंसेफ्लाइटिस से बच गए बच्चों में 20 फ़ीसदी बच्चों की आगे की ज़िंदगी का मतलब सिर्फ़ सांस लेना भर रह जाता है. लखनऊ के प्रसिद्ध फिज़ीशियन डॉ. नीरज भसीन कहते हैं कि जापानी इंसेफ्लाइटिस की मृत्यु दर तक़रीबन 50 फ़ीसदी है. इस बीमारी से जो बच भी जाते हैं, उनके शरीर और स्नायु तंत्र का नुक़सान (रेसीड्यूअल डैमेज) इतना हो चुका होता है कि बाक़ी की ज़िंदगी उनके लिए कोई मायने नहीं रखती. बीआरडी मेडिकल कॉलेज के प्रिंसिपल डॉ. आनंद सिंह कहते हैं कि मरीज़ों की बेतहाशा बढ़ती तादाद को देखते हुए दवा के लिए अस्पताल को हर साल 40 करोड़ रुपये की दवा की ज़रूरत होती है, लेकिन सरकार देती है महज़ 40 लाख रुपये.

आख़िर इस जानलेवा महामारी के फैलने की वजहें क्या हैं? इस बारे में प्रदेश का कोई स्वास्थ्य अधिकारी कुछ बताने की स्थिति में नहीं है. स्वास्थ्य विभाग के अधिकारी गंदगी-मच्छर को इसकी वजह बताते हैं. यदि ऐसा है तो यह रोग पूरे भारत में क्यों नहीं फैल रहा? एक ख़ास इलाक़े में ही बार-बार इसका प्रकोप क्यों हो रहा? प्रशासनिक-राजनीतिक रूप से उपेक्षित होने के कारण इस इलाक़े को कहीं ख़ास तौर पर प्रयोग के लिए तो नहीं चुना जा रहा? बीते 16 जून को अमेरिका के फ्लोरिडा विश्वविद्यालय में हुई एक कार्यशाला में कीटाणु आधारित आतंकवाद की आशंकाओं पर हुई चर्चा का

(शेष पृष्ठ 2 पर)

भारत में जैव आतंकवाद के दुष्प्रयोग

- » स्क्रब टाइफस-1965-पूर्वोत्तर भारत
- » बुबोनिक एंड न्यूमोनिक प्लेग-1994-बीड और सूरत
- » डेंगू हैमरेजिक फीवर-1996-दिल्ली
- » एंथ्रैक्स-1999-मिदनापुर बंगाल
- » मिस्ट्री इंसेफ्लाइटिस-2001-सिलीगुड़ी बंगाल
- » फुट एंड माउथ डिसीज़-2003-उत्तर भारत
- » बर्ड फ्लू-2007-संपूर्ण भारत
- » चिकनगुनिया-2008-मध्य भारत
- » स्वाइन फ्लू-2009-संपूर्ण भारत
- » जापानी इंसेफ्लाइटिस-1977 से 2010- पूर्वोत्तर उत्तर प्रदेश, दक्षिण-पश्चिमी बिहार और पश्चिमी नेपाल का तराई क्षेत्र.

माइक्रोबायोलॉजी के विशेषज्ञ कमल दत्ता एवं कर्नल ए नागेंद्र ने ब्रिटिश मेडिकल जर्नल में भी लिखा है कि लाखों की तादाद में भारतीयों को मौत की नींद सुलाने वाले ये कीटाणु जनित रोग जैव आतंकवाद के दुष्प्रयोगों का नतीजा हैं. इन जैव हथियारों (बायोलॉजिकल-वीपंस) को पुअर मैंस एटम बम कहा जाता है.

संपूर्ण पूर्वी उत्तर प्रदेश बंद कर देंगे : योगी आदित्य नाथ

पूर्वी उत्तर प्रदेश में फैले इस महारोग के प्रति सरकारी उपेक्षा के ख़िलाफ़ संघर्ष छेड़ने और रोगियों की सेवा में आगे बढ़कर काम कर रहे गोरखनाथ धाम के महंत एवं सांसद योगी आदित्य नाथ कहते हैं कि बीआरडी मेडिकल कॉलेज में रोगियों की एक बड़ी संख्या है. लोग खेत बेचकर इलाज के लिए आते हैं और अपने बच्चों की लाशें लेकर यहां से जाते हैं. इसे लेकर जनहित याचिका दाखिल करने की भी तैयारी हो रही है. न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना कोई ठोस नतीजा नहीं निकलने वाला. राज्य सरकार अदालत के आदेशों की भी उपेक्षा कर रही है. अब सख्त आंदोलन की ज़रूरत है, पूरा पूर्वी उत्तर प्रदेश बंद करना पड़ेगा. देश का बचपन असमय मौत का शिकार हो रहा है, यह ख़तरनाक संकेत है. सरकारी तानाशाही, भ्रष्टाचार, निकम्मेपन और उपेक्षा के ख़िलाफ़ हमने पूर्वी उत्तर प्रदेश के प्रत्येक ज़िले में आंदोलन की शुरुआत कर दी है. मेडिकल कॉलेज घेरे जाएंगे, प्रशासन घेरा जाएगा, फिर पूरा पूर्वी उत्तर प्रदेश ठप्प कर दिया जाएगा. दवा के नाम पर पैसा आ रहा है, लेकिन मेडिकल कॉलेज के प्रिंसिपल, स्वास्थ्य विभाग के अधिकारी और प्रदेश के स्वास्थ्य मंत्री उसे खा जाते हैं. बिहार के स्वास्थ्य मंत्री नंद किशोर यादव से बातचीत हुई है, लेकिन अपने प्रदेश में आम लोगों के स्वास्थ्य को लेकर चिंता किसे है? उत्तर प्रदेश के स्वास्थ्य मंत्री गोरखपुर आए, लेकिन जापानी इंसेफ्लाइटिस से पीड़ित बच्चों को देखने अस्पताल तक नहीं गए. स्वास्थ्य विभाग के महानिदेशक भी आए, लेकिन उन्होंने भी यह जहमत नहीं उठाई. आदित्य नाथ कहते हैं कि संसद में काफी हो-हल्ला करने के बाद गोरखपुर में राष्ट्रीय विषाणु शोध संस्थान की स्थापना की गई, लेकिन वह भी सरकारी उपेक्षा का शिकार है. दवाओं के नाम पर सरकार केवल 40 लाख रुपये देती है, जबकि पत्थरों और मूर्तियों पर अरबों-खरबों रुपये फूंके जा रहे हैं.

हाईकोर्ट ने राज्य पुलिस प्रमुखों की नियुक्तियों के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के दिशानिर्देशों की अनदेखी करने के लिए राज्य सरकार को फटकार भी लगाई.

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

सरकार को झटका

वरिष्ठ नौकरशाहों से संबंधित दो मामलों में न्यायपालिका के रुख से सरकारी तंत्र को एक के बाद एक यानी दो झटके लगे हैं. पहले मामले में चेन्नई हाईकोर्ट ने तमिलनाडु की द्रविड़ मुनेत्र कड़गम सरकार द्वारा लतिका शरण की पुलिस महानिदेशक के पद पर नियुक्ति के फ़ैसले को रद्द कर दिया. हाईकोर्ट ने राज्य पुलिस प्रमुखों की नियुक्तियों के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के दिशानिर्देशों की अनदेखी करने के लिए राज्य सरकार को फटकार भी लगाई. सूत्र बताते हैं कि कई वरिष्ठ अधिकारियों को नज़रअंदाज़ कर शरण को इस पद पर नियुक्त किया गया था. माना जा रहा है कि चेन्नई हाईकोर्ट के इस फ़ैसले का असर दूसरे राज्यों में भी देखने को मिलेगा, क्योंकि अपने प्रिय पात्रों को वरिष्ठ पदों पर नियुक्त करना राजनीतिज्ञों का शगल रहा है और इसके लिए वे कोई भी तरीक़ा अख्तियार करने से बाज नहीं आते. इसी तरह के एक दूसरे मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार को 1975 बैच के मध्य प्रदेश कैडर के आईएएस अधिकारी प्रशांत मेहता को अतिरिक्त सचिव के रैंक में प्रोन्नत करने का निर्देश दिया है. मेहता को प्रोन्नति देने के मामले में केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण (कैट) पहले ही आदेश जारी कर चुका था, फिर भी प्रोन्नत किए जाने वाले अधिकारियों की सूची में उनका नाम शामिल नहीं किया गया था. इसके बाद वह हाईकोर्ट की शरण में पहुंचे थे और हाईकोर्ट ने भी कैट के आदेश पर मुहर लगाई थी. इसके बावजूद केंद्र सरकार मामले को लेकर सर्वोच्च न्यायालय में पहुंची थी, लेकिन अब उसे शायद अपनी ग़लती का एहसास हो रहा हो. बहरहाल, न्यायपालिका के इस कड़े रुख़ के बावजूद इस बात की संभावना कम है कि मोटी चमड़ी वाले हमारे नेताओं के कानों पर जूं रेंगे.

ममता से घबराए वर्दीधारी

पश्चिम बंगाल में वाममोर्चे का गढ़ जितनी तेज़ी से कमज़ोर पड़ता जा रहा है, राज्य से वरिष्ठ नौकरशाहों के पलायन का सिलसिला भी उतनी ही तेज़ी से जारी है. आईएएस अधिकारियों के साथ राज्य में तैनात केंद्रीय पुलिस सेवा के अधिकारी भी बाहर निकलने के लिए हरसंभव कोशिश कर रहे हैं. वर्दीधारियों के डर को ममता बनर्जी के उस बयान से जोड़कर देखा जा रहा है, जिसमें उन्होंने वामपंथियों द्वारा अपने पार्टी समर्थकों पर हमले की घटनाओं के लिए वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों को दोषी ठहराया था. ममता विधानसभा चुनावों के बाद मुख्यमंत्री बनने का सपना देख रही हैं और पुलिस अधिकारी उनके कोप से बचने के लिए राज्य से बाहर निकलना ही बुद्धिमानी समझ रहे हैं. सूत्र बताते हैं कि अब तक 20 से ज़्यादा वरिष्ठ पुलिस अधिकारी राज्य से बाहर निकल चुके हैं, जबकि कई अन्य प्रतीक्षा में हैं. ख़बर यह भी है कि अतिरिक्त महानिदेशक स्तर के छह पद खाली पड़े हैं और कमोबेश यही हाल उप महानिदेशक स्तर के पदों का है.

जानने वाले बताते हैं कि नपराजित मुखर्जी को पुलिस महानिदेशक बनाए जाने के बाद से महानिदेशक (आईबी) का पद खाली पड़ा है. इसी तरह वागीश मिश्रा को महानिदेशक प्रशिक्षण के पद पर प्रोन्नत किए जाने के बाद से अतिरिक्त पुलिस महानिदेशक प्रशिक्षण का पद भी खाली पड़ा है. प्रतिनियुक्ति पर राज्य से बाहर निकलने का यह वायरस एसपी स्तर के अधिकारियों को भी अपने आगोश में लेता जा रहा है. एक ओर जब वाममोर्चा का किला ढहने के संकेत मिल रहे हैं और ममता बनर्जी की संभावित जीत के साथ राज्य की राजनीति नई करवट लेती हुई दिख रही है तो नौकरशाहों के इस रवैये को दोष भी नहीं दिया जा सकता.

dilipcherian@gmail..com

पचास हज़ार बच्चों की मौत का ज़िम्मेदार कौन?

पृष्ठ 1 का शेष

विषय ही था कि पैथोजेन-इंफेक्टेड वेक्टर एवं एडीज़ मच्छरों के ज़रिए फैलाए जाने वाले जैव आतंकवाद का मुक़ाबला कैसे किया जाए. होम लैंड सिक्यूरिटी को लेकर हुए इस आयोजन में आए विशेषज्ञों ने माना कि विषाणुओं से इंफेक्टेड मच्छर हालांकि बहुत विषाणु फैला चुके हैं, लेकिन जापानी इंसेफ्लाइटिस और चिकनगुनिया से अमेरिका उस तरह आक्रांत नहीं है, जिस तरह भारत. प्रत्यक्ष आतंकवाद के साथ-साथ जैव आतंकवाद का सुविधाजनक रास्ता अख्तियार करने में लगे कई प्रमुख आतंकवादी संगठन इस पर लगातार काम कर रहे हैं और विशेषज्ञता हासिल करते जा रहे हैं. विशेषज्ञों का कहना था कि कीटाणुओं के बारे में सतही जानकारी रखने वाले आतंकी गुट भी भारत जैसे ट्रॉपिकल क्लाइमेट वाले देशों में इसका आसानी से प्रयोग कर रहे हैं, लेकिन सरकार उन पर नियंत्रण के कोई उपाय नहीं कर रही है. जैव आतंकवाद के संवेदनशील मसले पर फ्लोरिडा विश्वविद्यालय में आयोजित सेमिनार का आयोजन विश्वविद्यालय के पैथोजेंस इंस्टीट्यूट, फ्लोरिडा मेडिकल एंटोमोलॉजी लेबोरेट्री और यूएसडीए सेंटर फॉर मेडिकल एग्रीकल्चरल एंड वेटरीनरी एंटोमोलॉजी की तरफ़ से किया गया था. चर्चित किताब वर्ल्ड एट रिस्क के लेखक, पूर्व गवर्नर एवं सिनेटर बॉब ग्राहम भी इस गोष्ठी में शामिल थे.

भारतीय सुरक्षा विशेषज्ञ भी कहते हैं कि मुंबई जैसे आतंकी हमलों से निबटने की तैयारियों पर तो देश का ध्यान है, लेकिन जैव आतंकवाद से निबटने का कोई उपाय फ़िलहाल उसके पास नहीं है. बंगलुरू स्थित नेशनल डिसास्टर मैनेजमेंट अथॉरिटी का इस दिशा में कुछ काम चल रहा है, लेकिन वह अभी शैशव अवस्था में है. अथॉरिटी के चेयरमैन लेफ्टिनेंट जनरल (रि.) जे आर भारद्वाज कहते हैं कि इसके लिए सरकार, कंपनियों और सामाजिक समुदायों से भारी सहयोग की ज़रूरत है. सेना मेडिकल कोर के महानिदेशक रहे भारद्वाज की निगरानी में जैव आतंकवाद से निबटने के उपायों पर शोध किए जा रहे हैं. इसके लिए बाक़ायदा गाइड लाइन भी जारी की गई है. इसकी गंभीरता इस बात से समझी जा सकती है कि एनडीएमए की आठ सदस्यीय टीम की अध्यक्षता ख़ुद प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह कर रहे हैं. विश्व स्वास्थ्य संगठन के पैसे पर एनडीएमए ने इंटीग्रेटेड डिज़ीज़ सर्विलांस प्रोग्राम भी शुरू कर रखा है. इसके लिए नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ कम्युनिकेबल डिज़ीज़ को नोडल एजेंसी भी बनाया गया है, लेकिन उत्तर भारत में फैल रहे इस महारोग पर कोई ध्यान ही नहीं है. विडंबना यह है कि इस प्रोग्राम को देश के क़रीब छह सौ ज़िलों तक पहुंचाए जाने का लक्ष्य है. जैव आतंकवाद से निबटने के लिए अलग से नेशनल डिज़ास्टर रेस्पॉन्स फोर्स की स्थापना की जा चुकी है. इसकी आठ बटालियनें बाक़ायदा काम कर रही हैं. एक बटालियन में एक हज़ार सदस्य हैं और दो बटालियनें बढ़ाए जाने के प्रस्ताव को मंजूरी भी मिल चुकी है. इस बल की ख़ासियत यह है कि इसे जैव, रासायनिक, रेडियोलॉजिकल एवं न्यूक्लियर आतंकवाद से निबटने के लिए ख़ास तौर पर प्रशिक्षित और तैयार किया गया है, पर किसी को पूर्वी उत्तर प्रदेश की रहस्यमय बीमारी नहीं दिख रही, जिसने यहां के मासूम बच्चों को गिनी-पिग बना डाला है. जबकि यूएस कमीशन ऑन दि प्रिवेंशन ऑफ वीपंस ऑफ मास डिस्ट्रक्शन प्रोलिफिरेशन एंड टेररिज़्म की वर्ल्ड एट रिस्क रिपोर्ट भी कहती है कि विश्व के कई देश जैव और परमाणु आतंकवाद के हमले की चपेट में हैं और इनमें भारत भी शामिल है.

देश के जैव विशेषज्ञ लगातार यह कहते रहे हैं कि भारत को डिज़ीज़ सर्विलांस की दिशा में काम करना चाहिए. उन्हें आशंका रही है कि बायो-टेररिस्ट अटैक सामान्य दिखने वाले छूआछूत के रोग या महामारी के रूप में हो सकता है. आर्म्ड फोर्सेस मेडिकल कॉलेज में माइक्रोबायोलॉजी के हेड रहे कर्नल अनंत सुब्रह्मण्यम नागेंद्र लगातार जैव आतंकवाद के ख़तरे के प्रति सतर्क करते रहे हैं. उनका कहना है कि जिस तरह कश्मीर से लेकर देश के अंदरूनी हिस्से तक आतंकवादी हरकतें और हमले जारी हैं, हमें तो जागना ही होगा. जैव आतंकवाद का ख़तरा भारतीय सेना और सुरक्षा विशेषज्ञों को पहले से ही डरा रहा है, लेकिन इसका मुक़ाबला करने के उपायों पर केंद्र कतई गंभीर नहीं है. जबकि 1965 के भारत-पाक युद्ध के दरम्यान पूर्वोत्तर राज्यों में फैले स्क्रब टाइफस नामक बीमारी के बारे में जैव युद्ध के हथियार के बतौर इस्तेमाल किए जाने की आशंका जताई गई थी. जैव युद्ध के हथियार के बतौर न्यूमोनिक प्लेग के फैलने के बारे में सैन्य विशेषज्ञ पहले से जानते हैं. सूरत के बीड इलाक़े में 1994 में फैले बुबोनिक प्लेग को भी इसी रूप में देखा जाता है, जिसमें सैकड़ों लोगों की जानें गई थीं. दिल्ली में 1996 में डेंगू का फैलना भी सुरक्षा विशेषज्ञों की नज़र में जैव आतंकवाद के हथियार का प्रायोगिक इस्तेमाल था. तब नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ कम्युनिकेबल डिज़ीज़ेज़ के निदेशक डॉ. कमल दत्ता ने साफ़-साफ़ कहा था कि डेंगू का इस तरह फैलना संदेहास्पद है और इसके पीछे जैव आतंकवाद फैलाने वाले तत्वों का हाथ होने का अंदेशा है. उसी साल दिल्ली में आधिकारिक तौर पर डेंगू के एक लाख

252 मामले दर्ज हुए और उनमें से 423 लोगों की मौत हो गई थी, लेकिन तबसे लेकर आज तक डेंगू की रोकथाम के क्या उपाय किए गए, यह सबके सामने है. सिलीगुड़ी में कुछ ही अर्सा पहले फैला रहस्यमय इंसेफ्लाइटिस जैव आतंकवाद का नमूना है, जिसमें आधिकारिक तौर पर 45 लोग और अनाधिकृत रूप से सैकड़ों लोग मरे. प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. नीरज भसीन पूर्वी उत्तर प्रदेश समेत उत्तर भारत में फैल रही महामारी को जैव आतंकवाद के दुष्प्रयोगों के रूप में देखने के बजाय सामाजिक स्वास्थ्य समस्या के रूप में देखते हैं और इसके कारगर इलाज की व्यवस्था को प्राथमिकता देते हैं. वह कहते हैं कि इसके कारणों की तलाश करना विशेषज्ञों का काम है, डॉक्टरों का काम तो इलाज करना और लोगों को स्वस्थ होने के लिए प्रेरित करना है.

बहरहाल, जैव-रासायनिक आतंकवाद के दुष्प्रयोगों के बतौर 2002-2003 में जब सार्स (सीवियर एक्यूट रेसपिरेटरी सिंड्रोम) फैलाया गया, तब भारत में बायोसेफ्टी लेवल-4 स्तर की केवल एक प्रयोगशाला थी. इन आठ सालों में, यानी 2010 तक सिर्फ एक नई प्रयोगशाला बन पाई. आज देश में महज़ दो प्रयोगशालाएं हैं. जैव आतंकवाद से निबटने में भारत सरकार की रुचि और गति का इसी से पता चल जाता है. अभी तक केंद्र सरकार ने ऐसा कोई क़ानून नहीं बनाया कि संघातक जैव, रासायनिक, रेडियोधर्मी या परमाणु आतंकवाद जनित हमलों में शिकार लोगों का त्वरित इलाज करना निजी अस्पतालों के लिए क़ानूनी बाध्यता हो. अब यह बात छुपी नहीं रही कि आतंकवादी संगठन अलक़ायदा बड़ी तादाद में जैविक हथियार जुटाने की कोशिश में लगा है. ख़ुफ़िया एजेंसियों के अधिकारी यह पुष्टि करते हैं कि अमेरिका में 9/11 हादसे के दो वर्ष पहले अलक़ायदा अफ़ग़ानिस्तान में एजेंट-एक्स नामक गोपनीय मिशन में लगा था, जो एंथ्रेक्स से संबद्ध था. आप याद करें, अक्टूबर 2001 में अमेरिका में चिट्ठियों में लगे एंथ्रेक्स पाउडर की वजह से पांच लोगों की जान गई थी. इसके ख़िलाफ़ अमेरिकी सरकार ने डार्क-विंटर नामक ऑपरेशन भी चलाया था. वर्ष 2001 में अमेरिका पर एंथ्रेक्स का हमला बायो-टेररिज़्म का उजागर मामला है. इसके बाद भारत पर एंथ्रैक्स हमले की कोशिशें हुईं. वर्ष 2001 में ही जैव आतंकवाद भारत में घुसा. उस समय महाराष्ट्र के उप मुख्यमंत्री छगन भुजबल को एंथ्रेक्स से युक्त लिफ़ाफ़ा भेजा गया. उस समय से रक्षा मंत्रालय के तहत डीआरडीओ जैविक आतंकवाद से निबटने के कारगर उपाय तलाशने में लगा है. अमेरिका का रक्षा मंत्रालय और स्वास्थ्य एवं समाजसेवा मंत्रालय दोनों ही बायो-टेररिज़्म का सामना करने के तौर-तरीक़ों पर लगातार काम कर रहे हैं, लेकिन भारत में नेता चादर तानकर सो रहे हैं. अमेरिका के रक्षा मुख्यालय पेंटागन की निगरानी में चलने वाले बायो-डिफेंस प्रोग्राम के तहत ज्वाइंट वैक्सीन ऐक्विज़िशन प्रोग्राम भी चलाया जा रहा है, जो ख़ास तौर पर संवेदनशील स्थानों पर तैनात अमेरिकी सैनिकों के लिए ज़रूरी वैक्सीन मुहैया कराता रहता है. इस विभाग ने येलो फीवर, जापानी इंसेफ्लाइटिस, टीबी, कॉलरा, प्लेग, एंथ्रेक्स और स्मॉल पॉक्स के टीके तो विकसित कर लिए हैं, लेकिन रक्षा विशेषज्ञों का मानना है कि जैव आतंकवाद के कई अन्य सक्रिय एजेंटों मसलन, टुलारेमिया, रिफ्ट वैली फीवर, इबोला, रिसिन, बोटुलिज़्म और स्टैफीलोकोक्वल एंटरोटॉक्सीन आदि के मुक़ाबले का अभी कोई उपाय नहीं ढूंढा जा सका है. 1977 में ही स्मॉल पॉक्स के ख़ात्मे की आधिकारिक घोषणा कर दी गई थी, इसके कारगर टीके का विकास भी कर लिया गया, लेकिन जैव आतंकवाद के ज़रिए कुछ ख़ास देशों में इसके फिर से फैलने की आशंकाएं जताई जा रही हैं, जिनमें भारत भी शामिल है. रक्षा स्वास्थ्य के विशेषज्ञों को जानकारी है कि अटलांटा के सेंटर फॉर डिजीज़ कंट्रोल एंड प्रिवेंशन के अलावा साइबेरिया के नोवोसिबर्स्क स्थित स्टेट रिसर्च सेंटर ऑफ वाइरोलॉजी एंड बायोटेक्नोलॉजी में स्मॉल पॉक्स के जीवाणु हैं. उल्लेखनीय है कि तत्कालीन सोवियत यूनियन ने जैविक हथियार के रूप में स्मॉल पॉक्स के कीटाणु बड़ी मात्रा में विकसित किए थे.

prabhatranjandeen@chauthiduniya.com

लखनऊ का यह हाल है, प्रदेश की हालत क्या होगी

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ भी इस अज्ञात ज्वर से पीड़ित है. पिछले तीन महीने से लखनऊ और उसके आसपास फैले अनजाने ज्वर से लोगों की मौतें हो रही हैं, शासन का मुख्यालय होने के बावजूद यहां कोई आधिकारिक तौर पर यह बताने वाला नहीं है कि यह ज्वर क्या है, और इसका इलाज क्या है. निजी डॉक्टरों, नर्सिंग होमों और झोलाछाप डॉक्टरों की बन आई है. एक दवा विक्रेता का कहना था कि इस बार जितनी दवाएं बिकी हैं, उतनी कभी नहीं बिकीं. अस्पतालों में भारी भीड़ है, लेकिन डॉक्टरों को पता नहीं चल रहा कि आखिर कौन सी बीमारी है, जो लोगों की इस तरह जान ले रही है. कोई डेंगू कह रहा है तो कोई कुछ और. मुख्य स्वास्थ्य अधिकारी डॉ. ए के शुक्ल कहते हैं कि लखनऊ में फैली बीमारी डेंगू नहीं है. लोग उल्टी-दस्त और हार्ट अटैक से मर रहे हैं. वहीं दूसरी तरफ़ प्रदेश के स्वास्थ्य महानिदेशक डॉ. एस पी राम कहते हैं कि लखनऊ समेत प्रदेश के 37 ज़िलों में डेंगू फैला हुआ है. डॉ. राम इसमें पूर्वी उत्तर प्रदेश के उन आठ ज़िलों का नाम नहीं लेते, जहां जापानी इंसेफ्लाइटिस से बच्चे मर रहे हैं. मुख्य सचिव अतुल कुमार गुप्त डेंगू की रोकथाम के लिए शीर्ष सत्ता गलियारे में बैठक बुलाकर औपचारिकताएं पूरी करते हैं, पर पूर्वी उत्तर प्रदेश में पसरती मौत के मसले पर उतना भी नहीं करते. डेंगू की रोकथाम के लिए भी कुछ नहीं किया जा रहा. स्वास्थ्य महानिदेशक इसे प्रकृति के हवाले छोड़ देते हैं, कहते हैं कि ठंड आएगी तो डेंगू अपने आप दब जाएगा.

घातक जीवाणुओं के प्रकार

कैटेगरी-ए: इस स्तर में सबसे घातक जीवाणु आते हैं. यह बहुत आसानी से लोगों को आक्रांत करता है और मृत्यु दर भी बहुत होती है. तकनीकी शब्दावली में इसे टुलेरेमिया या रैबिट फीवर कहते है. इसके जीवाणु फ्रैंसिसेला टुलेरेंसिस कहे जाते हैं. इससे होने वाली बीमारियों में सांस की व्याधि, जानलेवा निमोनिया और मृत्यु तक ले जाने वाला सिस्टम फेल्योर आदि शामिल हैं. एंथ्रैक्स भी कैटेगरी-ए की श्रेणी में आता है, लेकिन यह कंटेजस बीमारी नहीं है. यह पाउडर की शक्ल में होता है. 2001 के उत्तरार्द्ध में अमेरिकी सिनेटरों के ख़िलाफ़ एंथ्रैक्स का जीवाणु आतंकवाद के हथियार के रूप में इस्तेमाल किया गया था. भारत में भी इसे आजमाया गया था. जैव आतंकवाद के हथियार के रूप में बॉलुलिनम टॉक्सिन का भी इस्तेमाल किया जाता है. यह कैटेगरी-ए किस्म में रखा जाने वाला ख़तरनाक जीवाणु क्लोट्रिडियम बोटुलिनम है, जो श्वांस प्रणाली को ध्वस्त कर लकवाग्रस्त कर देता है और आख़िरकार आदमी की मौत हो जाती है. बुबोनिक प्लेग भी इसी कैटेगरी में जैव आतंकवाद में इस्तेमाल आने वाला रोग है. इसे येरसीनिया पेस्टिस बैक्टीरियम से फैलाया जाता है. मारबर्ग, इबोला, लास्सा फीवर या बोलिवियाई नाम से पुकारा जाने वाला यह बुख़ार जानलेवा होता है. रोगी की रक्तस्राव से मौत हो जाती है. इसका कोई इलाज मौजूद नहीं है.

कैटेगरी-बी: वायरल इंसेफ्लाइटिस, वेनेज्वेलन एक्वाइन इंसेफ्लाइटिस, ईस्टर्न एक्वाइन इंसेफ्लाइटिस, वेस्टर्न एक्वाइन इंसेफ्लाइटिस, वाइब्रियो कॉलरा, टाइफस, रिसिन, क्यू फीवर, पी-सिटाकोसिस, मेलिऑएडॉसिस, ग्लैंडर्स, ई-कोली, शिगेला एवं ब्रूसेलॉसिस जैसी बीमारियां कैटेगरी-बी में आती हैं, जो अत्यंत घातक होती हैं.

कैटेगरी-सी: इसमें आने वाले जीवाणुओं से वे बीमारियां फैलती हैं, जो दिखने में आम होती हैं, लेकिन उनका असर बहुत बड़ी जनसंख्या पर होता है और वे व्यापक तबाही मचाती हैं.

घातक जीवाणु बिखेरने वाला विमान
चीन ने मार गिराया, भारत ने जाने दिया

वर्ष 2009 के जून महीने की बात है, जब स्वाइन फ्लू के जीवाणुओं का छिड़काव कर रहे अमेरिकी विमान को चीन ने मार गिराया था. ऐसे ही संदेहास्पद उड़ान भरते अमेरिकी ऑपरेटेड विमान को भारत और नाइजीरिया की वायुसेना ने जबरन उतार तो लिया, लेकिन उसे मार गिराने का साहस उनमें नहीं था. चीन की शिक़ायत है और भारतीय ख़ुफ़िया विशेषज्ञों को संदेह है कि अमेरिकी ऑपरेटेड यूक्रेनियन विमान से बायोलॉजिकल एजेंट्स का छिड़काव किया जा रहा था. जिंबाब्वे के विमान एमडी-11 से ज़हरीले विषाणुओं का छिड़काव कर रहे अमेरिकी ऑपरेटेड विमान को चीन के शंघाई स्थित पुडॉन्ग एयरपोर्ट पर मार गिराया गया था. चीन ने आधिकारिक तौर पर बताया था कि वह विमान सीआईए से संबद्ध एविएंट एविएशन कंपनी का था. ब्रिटिश सेना का पूर्व अधिकारी एंड्रयू इस कंपनी का मालिक है और विमान का रजिस्ट्रेशन इंग्लैंड का है. इसमें सीआईए के तीन एजेंट्स मारे गए थे और चार जख्मी हुए थे, जो अमेरिका, बेल्जियम, इंडोनेशिया और जिंबाब्वे के नागरिक थे. इंडोनेशियाई नागरिक ने चीन की ख़ुफ़िया पुलिस के समक्ष यह स्वीकार किया कि वह अमेरिकी नौसेना के इंडोनेशिया अड्डे पर नेवल मेडिकल रिसर्च यूनिट नंबर-2 में काम करता है. उल्लेखनीय है कि इस अमेरिकी नौसैनिक अड्डे को हटाए जाने के बारे में वहां के रक्षा मंत्री जुवोनो सुदर्शनो कई बार मांग कर चुके हैं. इंडोनेशिया स्थित अमेरिकी नौसेना का बायो-वीपन बेस रॉकफेलर इंस्टीट्यूट के सहयोग से स्थापित है. रॉकफेलर इंस्टीट्यूट वायरल बीमारियों पर शोध और उपायों पर काम करने के लिए दुनिया भर में जाना जाता है. इस घटना के कुछ ही दिनों बाद 26 जून, 2009 को एएन-124 को मुंबई में फोर्स्ड लैंडिंग करनी पड़ी. भारतीय वायुसेना ने अमेरिकी ऑपरेटेड विमान को मुंबई में उतरने पर विवश कर दिया. ऐसे ही दूसरे विमान को नाइजीरियाई वायुसेना ने उतरने पर विवश किया. नाइजीरिया वायुसेना ने तो उस विमान के चालक दल के सदस्यों को गिरफ़्तार भी कर लिया, लेकिन भारत यह हिम्मत नहीं दिखा पाया. तथ्य यह है कि चीनी वायुसेना ने भारतीय और नाइजीरियाई वायुसेना को इस बारे में पहले ही ख़बर कर दी थी कि अमेरिकी विमानों से स्वाइन फ्लू (एच-1 एन-1) के जीवाणुओं का छिड़काव किया जा रहा है. इसके अलावा क़रीब 45 हज़ार किलोग्राम ख़तरनाक कचरा भी धुएं का फ़ायदा उठाते हुए बिखेरा जा रहा है. हालांकि अमेरिकी पक्ष का कहना है कि ऑपरेशन इंड्योरिंग फ्रीडम के तहत अमेरिकी विमान अफ़ग़ानिस्तान जा रहा था, लेकिन अमेरिकी वायुसेना को यूक्रेनी विमान लेने की ज़रूरत क्यों पड़ी थी, इसका कोई आधिकारिक जवाब नहीं दिया गया. मुंबई एयरपोर्ट पर विमान को 24 घंटे तक रोके रखा गया, लेकिन भारत सरकार ने कोई कार्रवाई नहीं की और आख़िरकार विमान को जाने की इजाज़त दे दी गई.

चौथी दुनिया
देश का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 2 अंक 34
दिल्ली, 01 नवंबर-07 नवंबर 2010

संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग
कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा
गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.
संपादकीय 0120-4783999/11-23418962
विज्ञापन + 91 9810017924
प्रसार + 91 9013478398
फैक्स न. 0120-4783950

पृष्ठ-16 (+4)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनः प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.
समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

बिहार चुनाव और पसमांदा मुसलमान

यूसुफ़ अंसारी

पसमांदा मुसलमान एक बार फिर चौराहे पर खड़े हैं. बिहार चुनाव में किसी पार्टी या गठबंधन को लेकर उनमें कोई उत्साह नहीं है. ज़्यादातर पसमांदा मतदाता ख़ामोश हैं. कभी पसमांदा आंदोलन के अगुवा रहे लोग इस चुनाव में आश्चर्यजनक रूप से निष्क्रिय हैं. कई पार्टियों की तरफ़ से बुलावा आने के बावजूद उन्होंने उनके दफ़्तर जाना या नेताओं से मिलना तक मुनासिब नहीं समझा. वजह साफ़ है, पसमांदा मुसलमान तमाम पार्टियों की वादाख़िलाफ़ी से ऊब चुके हैं. इस चुनाव में किसी भी पार्टी ने टिकटों के बंटवारे में पसमांदा मुसलमानों का ख्याल नहीं रखा. हमेशा की तरह इस बार भी उनकी टिकट की दावेदारी हर पार्टी में ख़ारिज़ हुई. कांग्रेस ने यूं तो बिहार में इस बार मुस्लिम कार्ड जमकर इस्तेमाल किया है, लेकिन उसकी फ़ेहरिस्त में पसमांदा मुसलमानों की तादाद दो-चार ही है. पिछले चुनाव में जिन पसमांदा मुसलमानों के वोटों के घोड़े पर सवार होकर नीतीश कुमार सत्ता की दहलीज़ पर पहुंचे थे, इस बार वह भी उन्हें भूल गए. पसमांदा मुसलमानों के मुद्दे की ही बदौलत नीतीश कुमार के बग़लगीर होने से लेकर राज्यसभा तक का सफ़र तय करने वाले अली अनवर को भी इस पर अब ऐतराज़ नहीं रहा. रही बात लालू प्रसाद यादव और रामविलास पासवान की, तो उन्हें पसमांदा मुसलमानों की फ़िक्र न कभी पहले थी और न अब है. वहीं भाजपा से किसी भी तरह की उम्मीद के बारे में सोचना ही बेकार है.

इन हालात में यह सवाल अहम हो जाता है कि आख़िर पसमांदा मुसलमान क्या करें, उनका वोट किधर जाए? ऐसे हालात में पसमांदा मुसलमानों को मोटे तौर पर नीतीश कुमार और लालू प्रसाद यादव में से किसी एक का चुनाव करना है. टिकट बंटवारे में नाइंसाफ़ी को नज़रअंदाज़ करके अगर पसमांदा मुसलमान इन दोनों में से किसी एक का चुनाव करते हैं तो नीतीश का पलड़ा थोड़ा भारी दिखता है. पसमांदा आंदोलन से जुड़े लोगों के दावे को अगर सच माना जाए तो लालू-राबड़ी के 15 सालों के राज में संसद, विधान मंडल और राज्य के आयोगों में कुल मिलाकर 25 पसमांदा मुसलमानों को नुमाइंदगी मिली, जबकि नीतीश कुमार के पांच साल के राज में 30 लोगों को इन जगहों पर नुमाइंदगी मिल चुकी है. पंचायती राज की बात करें तो इस वक़्त राज्य में 518 मुखिया पसमांदा मुसलमान हैं, 452 सरपंच हैं, 51 ज़िला परिषद के सदस्य और 22 प्रमुख हैं. लालू-राबड़ी के 15 सालों के राज में पंचायत स्तर पर पसमांदा मुसलमानों की तादाद उंगलियों पर गिनने लायक़ ही रही. इसके अलावा नीतीश कुमार ने अब्दुल क़य्यूम अंसारी, गुलाम सरवर, शहीद अब्दुल हमीद और भारत रत्न उस्ताद बिस्मिल्लाह ख़ान की जयंती सरकारी स्तर पर मनाकर पसमांदा मुसलमानों का दिल जीता. दलित-पिछड़े मुसलमानों के लिए तालीमी मरकज़ खोलकर उन्होंने संकेत दिए कि वह पसमांदा मुसलमानों के लिए वाक़ई कुछ करना चाहते हैं. पसमांदा आंदोलन में कभी अली अनवर के साथ रहे लोग पसमांदा समाज को नीतीश कुमार के इन कामों की जानकारी तो दे रहे हैं, लेकिन उनके हक़ में वोट करने की अपील नहीं कर रहे. टिकटों के बंटवारे में अपनी अनदेखी से यह तबक़ा नीतीश कुमार से ख़ासा ख़फ़ा है.

चुनाव के प्रति पसमांदा मुसलमानों की दिलचस्पी कम होने की एक वजह यह भी है कि किसी भी पार्टी ने अपने चुनाव घोषणापत्र में उनके मुद्दों को कोई तरजीह नहीं दी. लालू-पासवान के गठबंधन ने मुसलमानों के लिए 15 फ़ीसदी आरक्षण की वकालत करके पसमांदा समाज के जख्मों पर नमक छिड़कने का काम किया. पसमांदा मुसलमान मज़हबी आधार पर आरक्षण के सख्त ख़िलाफ़ हैं. वे चाहते हैं कि जस्टिस रंगनाथ मिश्र आयोग की सिफ़ारिशों के उस हिस्से पर अमल हो, जिसमें हिंदू अनुसूचित जातियों के समकक्ष पेशा करने वाले मुसलमानों को अनुसूचित जातियों में शामिल करके उन्हें दलित आरक्षण की सुविधा देने की बात कही गई है, लेकिन लालू-पासवान इस बारे में पसमांदा मुसलमानों को कोई ठोस आश्वासन नहीं दे सके. नीतीश कुमार ने आश्वासन तो दिया है, लेकिन उन्होंने बड़ी चालाकी से मुसलमानों के दोनों धड़ों को ख़ुश करने की कोशिश की है. जनता दल यूनाइटेड के घोषणापत्र में बिंदु पांच के दूसरे पैराग्राफ में लिखा है कि अल्पसंख्यक समुदाय के कल्याणार्थ सच्चर कमेटी एवं रंगनाथ मिश्र आयोग की अनुशंसाओं को लागू करने के लिए केंद्र सरकार पर दबाव बनाया जाएगा. दलित मुसलमानों को उनका हक़ दिलाने के लिए हम प्रतिबद्ध हैं और केंद्र सरकार पर इसके लिए बराबर दबाव बनाए रखेंगे. सरकारी नौकरियों में मुसलमानों को आरक्षण देने के मुद्दे पर जनता दल (यू) केंद्र सरकार पर दबाव डालेगा कि वह आरक्षण की मौजूदा अधिसीमा 50 प्रतिशत को बढ़ाने के लिए संविधान में आवश्यक संशोधन करे, ताकि मुस्लिम समाज को आरक्षण देने का मार्ग प्रशस्त हो सके.

इससे साफ़ है कि एक तरफ़ तो नीतीश कुमार दलित मुसलमानों के हक़ की बात करके पसमांदा मुसलमानों को ख़ुश करते दिखते हैं तो वहीं अगली ही लाइन में मुस्लिम समाज को आरक्षण देने की वकालत करके अगड़े मुसलमानों को ख़ुश करते दिखते हैं. घोषणापत्र जारी करते वक़्त जब नीतीश से इस दोहरी नीति के बारे में सवाल पूछा गया तो वह कोई स्पष्ट जवाब नहीं दे सके. हालांकि उन्होंने सफाई दी कि वह दलित मुसलमानों की ही वकालत कर रहे हैं. लेकिन घोषणापत्र की भाषा एकदम साफ है. इसे बेहद चालाकी के साथ लिखा गया है. आख़िरी वाक्य में वह अगड़े मुसलमानों के लिए सरकारी नौकरियों में 15 फ़ीसदी आरक्षण की मांग की वकालत कर रहे हैं. अन्य पिछड़ा वर्ग के 27 प्रतिशत आरक्षण में मुसलमानों के एक बड़े तबके को पहले से ही लाभ मिल रहा है तो फिर मुस्लिम समाज के लिए आरक्षण का मार्ग प्रशस्त करने की बात कहां से आ गई? ज़ाहिर है कि अगड़े मुसलमानों के संगठनों की तरफ़ से धार्मिक आधार पर आरक्षण की मांग को लेकर जो आंदोलन चलाया जा रहा है, घोषणापत्र में उसी का समर्थन किया गया है. एक साथ दो नावों की सवारी नीतीश कुमार को महंगी पड़ सकती है.

फोटो-*प्रभात पाण्डेय*

पसमांदा मुसलमानों को लालू या नीतीश से ज़्यादा नाराज़गी अपने उन नेताओं से है, जिन्होंने राज्यसभा या फिर विधान परिषद में पहुंचने के लिए पसमांदा आंदोलन का इस्तेमाल किया और फिर उसे बेसहारा छोड़ दिया. पिछले चुनाव में पसमांदा मुसलमानों ने खुलकर नीतीश कुमार का समर्थन किया था, लेकिन इस बार वह खुला समर्थन ग़ायब है. पसमांदा मतों में इस बार बिखराव भी हो चुका है. पहले जो पसमांदा मुसलमान अली अनवर और एजाज़ अली के बीच बंटे थे, वे अब कई मोर्चों में बंट चुके हैं. अली अनवर और उनके बाद पसमांदा महाज़ के अध्यक्ष बने सलाम परवेज़ पूरी तरह जनता दल (यू) के रंग में रंग चुके हैं. कभी अली अनवर के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने वाले उस्मान हलालख़ोर बीच चुनाव में नीतीश का साथ छोड़कर लालू के पाले में आ गए हैं. दलित मुस्लिम मुद्दे पर नीतीश कुमार के साथ सौदेबाज़ी करके राज्यसभा पहुंचने वाले एजाज़ अली इस बार अपनी अलग पार्टी बनाकर 50 सीटों पर चुनाव लड़ रहे हैं. पसमांदा मुसलमान अपने इन रहनुमाओं की सियासी पलटबाज़ियां देखकर हैरान और परेशान हैं. ये वे नेता हैं, जिन्होंने पसमांदा आंदोलन की बदौलत राज्यसभा, विधान परिषद और आयोगों में जगह पाई और बाद में आंदोलन और अपने साथियों को लात मार दी. अब इनकी सारी ताक़त अपने-अपने पद बचाने में लग रही है.

इस बिखराव के बावजूद पसमांदा मुसलमान कई विधानसभा सीटों पर अपनी ताक़त दिखाने का माद्दा रखते हैं. कई सीटों पर पसमांदा बिरादरियां अकेले ही चुनाव का रुख़ पलटने की ताक़त रखती हैं. लोकसभा चुनाव में कांग्रेस प्रवक्ता और यूपीए-एक में गृह राज्यमंत्री रहे शकील अहमद मधुबनी से चुनाव इसलिए हारे, क्योंकि उन्होंने बीच चुनाव में पसमांदा मुसलमानों के अस्तित्व को ही नकार दिया था. उनके एक बयान से नाराज़ होकर पसमांदा मुसलमानों ने बाक़ायदा ऐलान करके राजद के अब्दुल बारी सिद्दीक़ी को वोट दिया. नतीजा यह हुआ कि शकील अहमद तीसरे स्थान पर खिसक गए, लेकिन इस ग़लती से न उन्होंने कोई सबक़ सीखा और न कांग्रेस ने. कांग्रेस ने इस बार थोक के भाव मुसलमानों को टिकट दिए, लेकिन पसमांदा मुसलमानों में से दो-चार लोग ही टिकट के योग्य पाए गए. कांग्रेस से जुड़े पसमांदा तबक़े के स्थानीय मुस्लिम नेता आरोप लगा रहे हैं कि शकील अहमद, इमरान क़िदवई और महबूब अली क़ैसर ने मिलकर पसमांदा मुसलमानों को टिकट नहीं मिलने दिए. पसमांदा मुसलमानों की इस नाराज़गी की वजह से महबूब अली क़ैसर को अपने ही गढ़ में हार का मुंह देखना पड़ सकता है. कांग्रेस के कई और उम्मीदवार पसमांदा समाज की नाराज़गी से डरे हुए हैं. कई जगहों से खबरें आ रही हैं कि पसमांदा मुसलमान कांग्रेस के अगड़े मुस्लिम उम्मीदवारों को हराने के लिए ख़ामोशी से कमर कसे बैठे हैं. उनकी ख़ामोशी नीतीश कुमार और लालू प्रसाद यादव को भी परेशान कर रही है. पसमांदा आंदोलन में बिखराव की वजह से इनका वोट किसी एक तरफ़ पड़ने की उम्मीद तो नहीं है, लेकिन अलग-अलग क्षेत्रों में इनके अलग-अलग रुख़ की वजह से कई सीटों पर आश्चर्यजनक उलटफेर हो सकता है. पसमांदा मुसलमानों का रुख़ इस बार किसी की पार्टी नैया पार लगाने या डुबोने से ज़्यादा धोखा देने वालों को सबक़ सिखाने का लगता है. यह गुस्सा कहीं ज़्यादा मतदान के रूप में फूटेगा तो कहीं मतदान न करके. किस पसमांदा बिरादरी का वोट कहां और किस पार्टी के उम्मीदवार को मिलेगा, इसका फ़ैसला आख़िरी वक़्त में होगा.

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक हैं)

feedback@chauthiduniya.com

भटगांव विधानसभा क्षेत्र में नक्सल प्रभावित ओड़गी एवं भैय्याथान ब्लॉक के अलावा सूरजपुर ब्लॉक का आधा हिस्सा भी शामिल है.

दिल्ली, 01 नवंबर-07 नवंबर 2010
चौथी दुनिया

भटगांव उपचुनाव

भाजपा जीती या रमन सिंह सरकार?

छत्तीसगढ़ के आदिवासी एवं नक्सल प्रभावित ज़िले सरगुजा के भटगांव विधानसभा क्षेत्र के उपचुनाव के परिणाम ने जहां मुख्यमंत्री रमन सिंह और रणनीति बनाने में माहिर मंत्री बृजमोहन अग्रवाल का क़द बढ़ा दिया है, वहीं अंतर्विरोधों, गंभीर मतभेदों और कलह से जूझती कांग्रेस की बदतर स्थिति भी उजागर कर दी है. भटगांव में भाजपा सरकार और सरगुजा राज परिवार के बीच हुई इस चुनावी जंग के परिणाम ने जहां महल के कथित जनाधार के परखच्चे उड़ा दिए, वहीं प्रदेश की जनता ने यह भी महसूस कर लिया कि सत्ता के संसाधनों का जायज़-नाजायज़ फ़ायदा उठाने में ख़ुद को दूसरी पार्टियों से अलग बताने वाली भाजपा भी उन्हीं की तरह है. भाजपा ने इस चुनाव में धन का भी ज़बरदस्त इस्तेमाल किया. भटगांव उपचुनाव में भाजपा प्रत्याशी रजनी त्रिपाठी ने कांग्रेस के यू एस सिंह देव को 34,656 मतों के भारी अंतर से पराजित किया. नवगठित भटगांव विधानसभा सीट पर भाजपा का क़ब्ज़ा था. राज्य के दूसरे विधानसभा चुनाव में भाजपा के रवि शंकर त्रिपाठी पहली बार चुनाव लड़े थे और उन्होंने 35,943 मत हासिल कर अजीत जोगी समर्थक कांग्रेस उम्मीदवार श्यामलाल जायसवाल को 17,435 मतों से पराजित किया था. उस समय 29 प्रत्याशियों ने अपनी किस्मत आज़माई थी, जिसमें कांग्रेस-भाजपा से बाग़ी होकर बतौर निर्दलीय उम्मीदवार चुनाव लड़ने वालों की संख्या 11 से अधिक थी. इसके अलावा भाकपा, गोंगपा, सपा, बसपा, सीपीआई, रागोपा, शिवसेना, जनतादल (यू) एवं छत्तीसगढ़ विकास पार्टी के प्रत्याशी भी मैदान में थे. तब कांग्रेस से अलग होकर 6 लोग बतौर निर्दलीय चुनाव लड़े थे और उन्हें 23,738 मत मिले थे. भाजपा के बागियों में शामिल पार्टी के पूर्व प्रदेश अध्यक्ष एवं निष्कासित सांसद शिव प्रताप सिंह के पुत्र विजय प्रताप सिंह को अकेले 12,986 मत मिले थे. भाजपा विधायक रवि शंकर त्रिपाठी की जीत में इन बाग़ियों के अलावा वरिष्ठ कांग्रेसी टी एस सिंह देव की महत्वपूर्ण भूमिका मानी गई थी. सिंह देव की रवि शंकर त्रिपाठी से मित्रता जगज़ाहिर है और पार्टी प्रत्याशी जायसवाल को टिकट दिलाने वाले पूर्व मुख्यमंत्री अजीत जोगी से उनकी दूरी और विरोध भी. बदले में अंबिकापुर में स्वर्गीय त्रिपाठी एवं उनके समर्थकों ने चुनाव के दौरान सिंह देव का साथ दिया था. इसकी शिकायत अंबिकापुर से भाजपा के पराजित प्रत्याशी अनुराग सिंह देव ने पार्टी फोरम में भी की थी. राज्य विधानसभा के दूसरे कार्यकाल के लगभग डेढ़ वर्ष बाद एक सड़क हादसे में रवि शंकर त्रिपाठी का निधन होने के बाद भटगांव सीट रिक्त हो गई थी.

दुर्ग ज़िले के वैशाली नगर उपचुनाव में भाजपा को मिली अप्रत्याशित हार से मुख्यमंत्री रमन सिंह काफ़ी आहत थे और पार्टी में उनके विरोधी सक्रिय हो गए थे. यह सीट विधायक सरोज पांडे के सांसद चुने जाने से रिक्त हुई थी. मुख्यमंत्री किसी भी हालत में भटगांव सीट गंवाना नहीं चाहते थे. भटगांव से जैसी ख़बरें आ रही थीं, उनसे भाजपा सरकार और संगठन दोनों ही चिंतित थे. क्षेत्र के भाजपा कार्यकर्ता नेताओं से नाराज़ थे. यही नहीं, मनरेगा के तहत मज़दूरों का भुगतान भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ गया था, सड़कें जगह-जगह से उधड़ी पड़ी थीं, स्वास्थ्य सुविधाएं बदतर हो गई थीं. इसी के चलते जनता शासन से ज़बरदस्त नाराज़ थी. पूर्व विधायक स्वर्गीय त्रिपाठी ने हालांकि क्षेत्र के विकास के लिए अनेक योजनाएं स्वीकृत कराई थीं, लेकिन उनके सुस्त व्यवहार से कार्यकर्ता परेशान और नाराज़ थे. क्षेत्र के अधिकांश भाजपा नेता-कार्यकर्ता अपनी उपेक्षा के चलते सत्ता और संगठन से चिढ़े बैठे थे. इनमें पूर्व प्रदेश अध्यक्ष शिव प्रताप सिंह, उनके पुत्र विजय प्रताप सिंह, वरिष्ठ नेता अनिल सिंह मेजर आदि प्रमुख रूप से शामिल थे. परिस्थितियों को भांपकर मुख्यमंत्री ने चुनाव संचालन का भार वरिष्ठ कैबिनेट मंत्री बृजमोहन अग्रवाल को सौंपा और उप संचालन का भार ज़िले के प्रभारी मंत्री रामविचार नेताम को.

मुख्यमंत्री को अच्छी तरह पता था कि क्षेत्र के अधिकतर बाग़ी कार्यकर्ताओं एवं शिव प्रताप सिंह के अग्रवाल से बेहद अच्छे संबंध हैं. शिव प्रताप को रमन सरकार की कार्यप्रणााली एवं मंत्रियों के व्यवहार की निंदा करने पर न केवल अध्यक्ष पद से हटा दिया गया था, बल्कि उन्हें पार्टी से निलंबित भी कर दिया गया था. क्षेत्र में वरिष्ठ भाजपा नेता दिलीप सिंह जूदेव का भी अच्छा जनाधार है और वह भी अग्रवाल के बेहद क़रीबी हैं. दूसरी रणनीति के रूप में मुख्यमंत्री ने बतौर प्रत्याशी स्वर्गीय रवि शंकर त्रिपाठी की पत्नी रजनी त्रिपाठी का चयन किया. मतलब साफ़ था कि वह त्रिपाठी के असामयिक निधन से उपजी सहानुभूति को मतों में बदलना चाहते थे. रजनी त्रिपाठी विशुद्ध गृहिणी रही हैं, उनकी न तो कोई समाजसेवा की पृष्ठभूमि रही है और न ही राजनीतिक. तीसरा कदम सरकारी संसाधनों के भरपूर उपयोग के रूप में उठाया गया. रमन सिंह ने एक-दो मंत्रियों को छोड़कर अधिकांश मंत्रियों, सांसदों एवं विधायकों की ड्यूटी भरपूर संसाधनों और धन बल के साथ भटगांव में लगा दी. एक और महत्वपूर्ण कदम उठाते हुए शिव प्रताप सिंह एवं उनके पुत्र विजय प्रताप सिंह को एक चुनावी सभा के दौरान पुन: पार्टी में शामिल करा लिया गया. बदले में उनके ज़ोरदार राजनीतिक पुनर्वास की गारंटी भी दी गई.

उधर दूसरी तरफ़ कांग्रेस हमेशा की तरह गुटों में बंटी मानसिक रूप से चुनाव को लेकर सुस्ती में रही. बताते हैं कि राज परिवार अपने परिवार से किसी व्यक्ति को ऐसी स्थिति में चुनाव नहीं लड़ाना नहीं चाहता था, पर पार्टी के प्रदेश अध्यक्ष धनेंद्र साहू, नेता प्रतिपक्ष रवींद्र चौबे एवं पूर्व मुख्यमंत्री अजीत जोगी की रणनीति के दबाव में यू एस सिंह देव को कांग्रेस प्रत्याशी घोषित कर दिया गया. जबकि वह चुनाव लड़ने के इच्छुक नहीं थे और वरिष्ठ कांग्रेसी एवं रिश्ते में उनके भतीजे टी एस सिंह देव भी ऐसा ही चाहते थे. यू एस सिंह देव मज़बूत प्रत्याशी थे. उनका साफ़-सुथरा राजनीतिक इतिहास रहा है और भाजपा प्रत्याशी की तुलना में उनका जनाधार भी बढ़िया था. माना यह जा रहा था कि वह भाजपा को शिकस्त देंगे और यह कांग्रेस के आरामपसंद नेताओं का अति आत्मविश्वास भी बन गया था. भटगांव में कांग्रेस ने वैशाली नगर वाली रणनीति अपनाई थी और प्रदेश प्रभारी नारायण सामी ने सांसद चरणदास महंत, सभी विधायकों, प्रदेश अध्यक्ष धनेंद्र साहू एवं नेता प्रतिपक्ष रवींद्र चौबे की ड्यूटी भी लगा दी थी, पर पार्टी नेता-कार्यकर्ता एकजुट नहीं रह सके, राज परिवार से भी उनका तालमेल नहीं बैठ पाया. चुनावी मुद्दों को लेकर भी कांग्रेस कोई रणनीति नहीं तय कर पाई. पार्टी के नेता-कार्यकर्ता अपने प्रत्याशी के गुणों-विशेषताओं को लेकर मतदाताओं के बीच ज़ोरदार ढंग से नहीं पहुंच पाए. राज्य सरकार की असफलताओं को लेकर तीखे वार करने से भी उन्होंने परहेज किया. रही-सही कसर क्षेत्र में प्रचार करने पहुंचे जोगी के बयान ने पूरी कर दी कि यदि मैडम की आज्ञा हो तो वह रमन सरकार को गिरा सकते हैं.

भटगांव विधानसभा क्षेत्र में नक्सल प्रभावित ओड़गी एवं भैय्याथान ब्लॉक के अलावा सूरजपुर ब्लॉक का आधा हिस्सा भी शामिल है और यहां लगभग एक लाख 80 हज़ार मतदाता हैं, जिनमें गोंड आदिवासियों की संख्या 40 हज़ार से भी ज़्यादा है. यही नहीं, कंवर, खैरवाड़, पंडो, रजवार एवं कुशवाहा जाति के साथ-साथ दूसरे प्रदेशों से आकर बसे सामान्य वर्ग के मतदाताओं की संख्या भी अच्छी-ख़ासी है. प्रचार के शुरुआती दौर में कांग्रेस की पकड़ मज़बूत थी, जिसे लेकर रमन सिंह एवं अग्रवाल बेचैन थे, लेकिन कुछ दिनों बाद उन्होंने कांग्रेस के बिखराव और उसके नेताओं की कमज़ोरी को भांप लिया. भाजपा के शिव प्रताप गोंड मतदाताओं के बल पर चार बार इस क्षेत्र से विधायक रह चुके हैं और स्वयं इसी वर्ग के हैं. कांग्रेस ने इसकी कोई काट नहीं ढूंढ़ी. उसने भ्रष्टाचार का मुद्दा भी बहुत कमज़ोर ढंग से उठाया. जबकि मुख्यमंत्री रमन सिंह एवं उनकी टीम ने त्रिपाठी के निधन से उपजी सहानुभूति को बख़ूबी भुनाया. भाजपा ने नेताओं को क्षेत्रवार ज़िम्मेदारियां सौंपी. रजनी त्रिपाठी ने भी भावुक अंदाज़ में भाषण देकर जनता के दिल में उतरने की कोशिश की. भाजपा ने बूथ प्रबंधन पर ख़ासी मशक्कत की और वहां तैनात कांग्रेसी नेताओं-कार्यकर्ताओं को मैनेज कर लिया. भाजपा के रणनीतिकारों ने प्रभावशाली मंत्रियों-विधायकों को भरपूर संसाधनों के साथ वहां तैनात कर दिया, जबकि कांग्रेस के वरिष्ठ नेता क्षेत्र से दूर अंबिकापुर के होटलों में आराम फरमाते रहे. चुनाव के दौरान भटगांव में प्रदेश कांग्रेस और राज परिवार के बीच की दूरी भी नहीं मिट सकी. सरगुजा राज परिवार यह समझने में नाकाम रहा कि क्षेत्र में उसकी पकड़ कमज़ोर होती जा रही है. ज़िले का व्यापारी समाज भी पूरी तरह भाजपा के साथ डटा रहा और भाजपा के लिए उसने अपनी थैलियां खोल दीं. अंतिम चार दिनों में यह लगने लगा था कि राज परिवार के वर्चस्व वाली ज़िला कांग्रेस पिछड़ने लगी है. प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष धनेंद्र साहू की जिद्द ने भी पार्टी कार्यकर्ताओं को उदासीन कर दिया. नतीजतन, मामला बिगड़ गया.

रही-सही कसर मुख्यमंत्री की जनसभाओं ने कर दी. अंतिम दिनों में भाजपा राज्य शासन में तब्दील हो गई और सरकारी संसाधनों का जमकर दुरुपयोग किया गया. चुनाव पर्यवेक्षक की चेतावनियों के बावजूद भाजपाई मंत्रियों, सांसदों एवं विधायकों की अनेक गाड़ियां क्षेत्र में बेख़ौफ़ घूमती रहीं. परिणामस्वरूप भाजपा की ग़ैर राजनीतिक-ग़ैर सामाजिक पृष्ठभूमि वाली प्रत्याशी रजनी त्रिपाठी ने कांग्रेस के यू एस सिंह देव को 34,656 मतों से हरा दिया. इतने भारी अंतर से भाजपा की जीत बृजमोहन अग्रवाल की कूटनीतिक जीत भी है. इस चुनाव में भाजपा को 74 हज़ार से अधिक मत मिले, जबकि कांग्रेस को 39,436 मत हासिल हुए. राज्य के पूर्व वित्तमंत्री रामचंद्र सिंह देव का आरोप है कि भाजपा ने इस चुनाव में 7 करोड़ रुपये से ज़्यादा धनराशि ख़र्च की और चुनाव पर्यवेक्षक ने शिकायतों पर सिर्फ़ औपचारिक कार्यवाही की.

शिवा कुमार/केशव शर्मा
feedback@chauthiduniya.com

सरकार यदि वास्तव में प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार के लिए इच्छुक होती और उसे आम लोगों का हितैषी बनाने का पक्षधर होती तो उसके पास इसके लिए आधारों की कोई कमी नहीं थी.

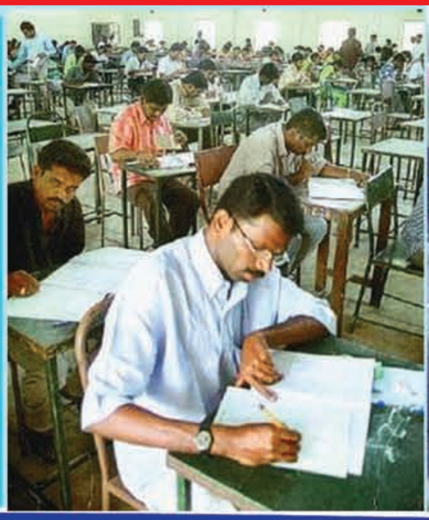

प्रशासनिक परीक्षा में बदलाव

हक़ीक़त की अनदेखी

रीतिका सोनाली

लंबे समय से बदलाव की मांग के मद्देनज़र केंद्र सरकार ने केंद्रीय प्रशासनिक सेवा की प्रारंभिक परीक्षा के प्रारूप में बदलाव कर दिया है. इसके तहत संघ लोक सेवा आयोग की प्रारंभिक परीक्षा के पाठ्यक्रम में बदलाव किए गए हैं. अगले साल यानी 2011 से वैकल्पिक प्रश्नपत्र नहीं होगा, इसकी जगह अभ्यर्थियों को दो अनिवार्य विषयों की परीक्षा देनी होगी. दोनों परीक्षाएं दो-दो घंटे की होंगी. प्रारंभिक परीक्षा में दोनों प्रश्नपत्र 200-200 अंकों के होंगे. पहले प्रश्नपत्र में राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय महत्व की सामयिक घटनाएं, भारत का इतिहास एवं संस्कृति, भूगोल, राजनीति, अर्थव्यवस्था, सामाजिक विकास, पर्यावरण, पारिस्थितिकी, जैव विविधता, जलवायु परिवर्तन, विश्व भूगोल और भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन जैसे विषय शामिल होंगे. वहीं दूसरे प्रश्नपत्र में संवाद कौशल, सामान्य विज्ञान, निर्णय क्षमता, समस्या समाधान, सामान्य मानसिक योग्यता, दसवीं स्तर का संख्यात्मक गणित और अंग्रेजी भाषा की योग्यता, तार्किक क्षमता और विश्लेषणात्मक योग्यता आदि से संबंधित प्रश्न पूछे जाएंगे. प्रशासनिक सेवा की परीक्षा में बदलाव की प्रतीक्षा लंबे समय से की जा रही थी, लेकिन व्यवस्था की ज़रूरत के हिसाब से इस बदलाव का औचित्य कितना सही है, इसका आकलन बेहद ज़रूरी है.

सरकार यदि वास्तव में प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार के लिए इच्छुक होती और उसे आम लोगों का हितैषी बनाने का पक्षधर होती तो उसके पास इसके लिए आधारों की कोई कमी नहीं थी. 1974 में आई कोठारी कमेटी की रिपोर्ट हो या 1988 में आई सतीश चंद्रा कमेटी की रिपोर्ट या फिर 2001 में आई वाई के अलग कमेटी की रिपोर्ट, इन सभी में परीक्षा व्यवस्था में सुधार के लिए तमाम तरह के सुझाव दिए गए हैं, लेकिन सरकार ने इन्हें नज़रअंदाज़ कर जो परिवर्तन किए हैं, वे प्रशासनिक व्यवस्था को कारपोरेट कल्चर के अनुरूप ढालने की एक कोशिश भर हैं. यह अंग्रेजों के शासन के उस दौर की याद दिलाते हैं, जब ज़िले के मुखिया को कलेक्टर कहा जाता था और उसका मुख्य काम कर की उगाही करना था. सामाजिक न्याय या आम जनता की समस्याओं से उसका कोई लेना-देना नहीं होता था. ताजा बदलावों से प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार की उम्मीद तो दूर, उसके और पीछे चले जाने का ख़तरा हो सकता है. वाई के अलग कमेटी ने पहले भी इस परीक्षा के प्रारूप में बदलाव की ज़रूरत महसूस करते हुए कई सुझाव दिए थे, जिनमें इस परीक्षा के ज़रिए प्रशासनिक सेवा में आने वाले अधिकारियों से देश की आबादी का जो हिस्सा सबसे ज़्यादा प्रभावित होता है, उसे ध्यान में रखा गया था. लेकिन सरकार द्वारा किए गए इस बदलाव से आम आदमी और प्रशासनिक अधिकारियों को दूर करने की साज़िश साफ़ नज़र आती है.

वाई के अलग कमेटी की रिपोर्ट की मुख्य बातें

- प्रशासनिक अधिकारियों की मानसिकता स्वयं को शासक और आम जनता को शासित के रूप में देखने की है.
- अधिकारी वर्ग खुद को ज्ञान और बुद्धिमत्ता का अथाह भंडार समझता है.
- प्रशासनिक तंत्र का ढांचा ऐसा है, जिससे जाति, धर्म एवं प्रांत आदि के आधार पर भेदभाव को बल मिलता है.
- प्रशासनिक अधिकारी अपनी क्षमताओं और योग्यताओं को बढ़ाने की दिशा में प्रयास नहीं करते.
- प्रशासन में भ्रष्टाचार लगातार बढ़ रहा है.

प्रशासनिक सेवा की प्री परीक्षा में अनिवार्य बनाया गया दूसरा प्रश्नपत्र प्रबंधन कॉलेजों में प्रवेश के लिए होने वाली परीक्षा से प्रेरित है, जिसका न तो जनता की ज़रूरतों में किसी तरह का योगदान हो सकता है और न यह प्रशासनिक व्यवस्था में कोई ख़ास फ़र्क़ लाने का काम कर सकता है.

ग़ौरतलब है कि इस परीक्षा में बिहार, उत्तर प्रदेश एवं उड़ीसा जैसे राज्यों के विद्यार्थियों की भागीदारी सबसे ज़्यादा होती है और उनकी सफलता का अनुपात भी सबसे ज़्यादा होता है. इन राज्यों की शिक्षा व्यवस्था में माध्यमिक स्तर तक अंग्रेजी शिक्षा पर ज़्यादा ज़ोर नहीं होता, लेकिन अंग्रेजी विषय को अनिवार्य करने से इन राज्यों के प्रतिभावान छात्रों के भविष्य पर ग्रहण लग सकता है. इसके ठीक उलट देश के मेट्रो शहरों के बच्चे अंग्रेजी तालीम हासिल करने की वजह से इस परीक्षा में ज़्यादा बेहतर कर पाएंगे. लेकिन यह ग़ौर करना ज़रूरी है कि बड़े शहरों के बच्चे, जिन्होंने देश के आम आदमी का जीवन नहीं देखा, क्या वे आम आदमी की समस्याओं को समझ पाएंगे? उनकी समस्याओं के समाधान के लिए उपाय तलाश कर पाएंगे? क्या इन बदलावों से सरकारी महकमों के नुमाइंदों, जिन्हें हम स्टील फ्रेम कहते हैं, को अपनी ज़िम्मेदारियों का बेहतर तरीक़े से निर्वाह करने में मदद मिलेगी या फिर ये बदलाव उन छात्रों को मायूस करेगा, जो वर्तमान में यूपीएससी परीक्षा की तैयारी कर रहे हैं? यूपीएससी ने बदलाव तो किए हैं, लेकिन ये बदलाव कैसे हैं, किनके लिए हैं और क्या इस बदलाव से एक बेहतर प्रशासन की उम्मीद जो हम लगाए बैठे हैं, पूरी हो सकती है? यह संभव होता नहीं दिखता, क्योंकि ये बदलाव मनमाने ढंग से किए गए हैं.

इस तरह के बदलाव के पीछे सरकार की मंशा देश की प्रशासनिक व्यवस्था को कारपोरेटाइज करने की कोशिश हो सकती है. कारपोरेट कल्चर में सामाजिकता की कोई जगह नहीं होती है, उस सिस्टम का सारा ध्यान चीजों को मैनेज कर उनसे फ़ायदा लेने का होता है. जबकि प्रशासनिक व्यवस्था का असली मक़सद आम लोगों को फ़ायदा पहुंचा कर समाज का विकास करना होता है. इस सच्चाई पर ग़ौर करें तो सरकार की इस नीयत का पता चलता है कि उसे आम आदमी की समस्याओं की कोई चिंता नहीं है. इससे देश के अमीर और ग़रीब लोगों के बीच की खाई और भी गहरी हो जाएगी. आबादी के अमीर तबके के पास संसाधनों के साथ प्रशासनिक सेवाओं का सामंजस्य और ताक़त होगी, जबकि देश की बहुसंख्यक ग़रीब जनता, जो प्रशासनिक अधिकारियों के ज़रिए सरकारी योजनाओं से लाभांवित होने की उम्मीद रखती है, वंचित रह जाएगी. वाई के अलग कमेटी के सुझावों का ध्येय प्रशासनिक अधिकारियों के शासक माइंडसेट को ख़त्म करना था.

इसका आधार यह था कि समाज के आम वर्ग के लोगों की ज़रूरतों को ध्यान में रखते हुए प्रशासनिक सेवा की परीक्षा में बदलाव किया जाए. लेकिन सरकार ने उसके सुझावों की अनदेखी कर दी और जो बदलाव किए हैं, उनसे अधिकारियों के मानसिक दृष्टिकोण में अहं आ जाना स्वाभाविक है. जहां देश की बहुसंख्यक जनता अंग्रेजी भाषा से अनजान है, वहीं अपने अंग्रेजी ज्ञान के बल पर प्रशासनिक सेवा में चुने गए इन अधिकारियों को एलिट वर्ग से जुड़े होने की गफ़लत हो सकती है. इससे उनके पदों और ज़िम्मेदारियों का उद्देश्य ही ख़त्म हो जाने का ख़तरा हो सकता है. प्रशासनिक अधिकारी पहले तक़रीबन 20 साल किसी ज़िले के अधिकारी आदि होते हैं. ये ज़िले देश के किसी भी कोने में हो सकते हैं, लेकिन ख़ुद को एलिट समझने वाले अधिकारी ऐसे ज़िलों में जाना कितना पसंद करेंगे, यह आसानी से अंदाज़ा लगाया जा सकता है. वहां काम करना उनके लिए और भी ज़्यादा मुश्किल होगा, क्योंकि वे वहां की ज़मीनी हक़ीक़त से अनजान होंगे.

सच्चाई यह है कि प्रशासनिक सेवा परीक्षा में किया गया यह बदलाव प्रशासन के मशीनीकरण की तैयारी है. उसे मानवीयता और मानवीय मूल्यों से और ज़्यादा दूर करने की तैयारी है. सरकार अपने हिसाब से बदलाव कर रही है, लेकिन देश की बहुसंख्यक ग़रीब जनता की समस्याएं क्या हैं और उन समस्याओं का निदान कैसे हो, सरकार को इसकी सही समझ ही नहीं है. तभी तो प्रारंभिक परीक्षा में अंग्रेजी को अनिवार्य किया गया है. सवाल यह है कि अंग्रेजी के महारथी क्या कालाहांडी की भूखी जनता का दर्द समझ पाएंगे, कोसी की बाढ़ में हर साल बहते सीमांचल के लोगों के आंसुओं की धार को रोक पाएंगे? नहीं, क्योंकि सरकार का यह मक़सद नहीं है, सरकार का असली मक़सद तो प्रशासनिक व्यवस्था को बाज़ारवाद और नव उदारवाद के ढांचे में ढालना है. इस व्यवस्था से पैदा हुए प्रशासक नए ज़माने के सामंत होंगे, जो शेयर बाज़ार के उतार- चढ़ाव को तो समझेंगे, लेकिन अशिक्षित और ग़रीब जनता की धड़कनों को महसूस नहीं कर पाएंगे.

ritika@chauthiduniya.com

ममता अगर राज्य की अगली मुख्यमंत्री बनने के प्रति आश्वस्त हैं तो ज़ाहिर है कि यह उन्हीं के कार्यकाल में बनेगा. तो फिर उन्होंने इतनी बड़ी परियोजना से जुड़े समारोह का बहिष्कार क्यों किया?

पश्चिम बंगाल

राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता का कुरूप चेहरा

बिमल राय

सत्ता के बदलाव के मुहाने पर खड़े पश्चिम बंगाल में राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता अब पूरी तरह गलाकाट दुश्मनी का रूप ले चुकी है. दलों के शीर्ष नेताओं का आचरण देख कार्यकर्ता और भी उत्साहित हो रहे हैं. ख़ासकर माकपा और तृणमूल कॉडरों के बीच ख़ूनी जंग थमने का नाम नहीं ले रही है. सचमुच ऐसा शायद ही किसी राज्य में दिखता हो कि मुख्यमंत्री और विपक्ष का सर्वोच्च नेतृत्व हर क़ीमत पर एक-दूसरे से आंख मिलाने से परहेज करता हो. इस प्रक्रिया में भले ही मर्यादाएं टूटती हैं तो टूटें. बंगाल की तहज़ीब तार-तार होते सब देखते हैं, पर दुश्मनी इतनी कट्टर है कि किसी को किसी बात की परवाह नहीं है. इस दुश्मनी ने परिवर्तन के बाद वाले बंगाल के एजेंडे को भी आशंका की धुंध में लपेट लिया है. फोकस में ममता बनर्जी ही हैं. उनके सत्ता में आने से पहले कई तरह के सवाल उभर रहे हैं. सवाल यह भी है कि उद्योगों के लिए भूमि अधिग्रहण पर ऐसा ही कट्टर रुख़ रहा तो विकास का वादा वह कैसे पूरा करेंगी? ममता क्या सिर्फ़ बहुत सारी ट्रेनें चलाकर या रेलवे की ज़मीन पर उद्योग लगाकर जनता को संतुष्ट कर पाएंगी? क्या वह नहीं चाहेंगी कि राज्य में एक ज़िम्मेदार विपक्ष हो? अगर ऐसा वह चाहेंगी तो कम से कम छह-आठ महीनों तक एक ज़िम्मेदार विपक्ष बनकर दिखा सकती थीं, लेकिन नहीं, ऐसा कुछ भी होता नहीं दिख रहा है.

अपने राज के आख़िरी वर्षों में ज्योति बसु मायूस होकर एक बात बार-बार कहते थे कि बंगाल के ग़ैर ज़िम्मेदाराना विपक्ष की मिसाल देश में कहीं नहीं मिलती. उस समय उनका कहना या यह आरोप सौ फ़ीसदी सही नहीं था, पर रोग के क्रोनिक होने से अब ऐसे लक्षण साफ़-साफ़ दिखने लगे हैं. अभी हाल में लोकसभा के पूर्व अध्यक्ष सोमनाथ चटर्जी ने भी कहा था कि राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता का मतलब राजनीतिक दुश्मनी नहीं है. दुश्मनी भी कैसी है, इसकी मिसाल राष्ट्रपति प्रतिभा देवी सिंह पाटिल की 21 सितंबर की बंगाल यात्रा के दौरान दिखी. राष्ट्रपति मेट्रो की विस्तार परियोजना का उद्‌घाटन करने आईं तो ममता ने मुख्यमंत्री को निमंत्रण ही नहीं भेजा. क़ायदे से ज़मीन मुहैया कराने का काम राज्य सरकार का है और इसमें उसने पूरा सहयोग दिया. मुख्यमंत्री ने परंपरा का निर्वाह करते हुए हवाई अड्डे पर राष्ट्रपति की अगवानी की, पर समारोह में मुख्यमंत्री नहीं थे. ममता रेलवे से संबंधित किसी परियोजना के उद्‌घाटन कार्यक्रम में वाम नेताओं को नहीं बुलाती हैं. कम से कम जिस क्षेत्र में परियोजना का उद्‌घाटन होता है, वहां के सांसदों-विधायकों को बुलाने की स्वस्थ परंपरा रही है, पर बंगाल में अब ऐसा नहीं दिखता. कुछ मामलों में निमंत्रण इतनी देर से दिया जाता है कि मंत्रियों का पहुंच पाना संभव नहीं होता या एक तरह से कहें तो अपमानजनक भी होता है. एक और मिसाल देखें. हाल में राजारहाट न्यू टाउन का नामकरण ज्योति बसु नगर किया गया. देश में मुख्यमंत्री के रूप में सबसे अधिक दिनों तक राज करने वाले ज्योति बसु जिस क़द के नेता थे, उसके मद्देनज़र यह एक बेहतर श्रद्धांजलि थी. हालांकि तृणमूल को इस पर भी आपत्ति थी और उसके नेताओं ने इसके ख़िलाफ़ आंदोलन करने की बात कही. 12 अक्टूबर को वहां एक बिजनेस हब बनाने का निर्णय लिया गया. यह बिजनेस हब मुंबई के बांद्रा-कुर्ला कांप्लेक्स के बाद देश का दूसरा हब होगा. केंद्र सरकार की ओर से वित्तमंत्री प्रणव मुखर्जी पहुंचे. वाम सरकार के एक मंत्री ने ममता के घर पर निमंत्रण भिजवाया, पर ममता नहीं आईं. 16 हज़ार करोड़ रुपये की लागत से बनने वाले इस हब से 3 लाख लोगों को रोज़गार मिलेगा. ममता अगर राज्य की अगली मुख्यमंत्री बनने के प्रति आश्वस्त हैं तो ज़ाहिर है कि यह उन्हीं के कार्यकाल में बनेगा. तो फिर उन्होंने इतनी बड़ी परियोजना से जुड़े समारोह का बहिष्कार क्यों किया? इसमें पूंजी लगा रहे उद्योगपतियों में क्या इससे ग़लत संदेश नहीं जाएगा? इतनी दूर तक शायद ममता नहीं सोचतीं. लगता है कि उन्होंने बुद्धदेव के साथ एक मंच पर न दिखने की कसम खाई है. बंगाल कांग्रेस के मुखिया मानस भुइयां मंच पर गए तो तृणमूल के एक बड़बोले नेता ने उन्हें माकपा का दलाल तक कह दिया. राहुल गांधी द्वारा सिर न झुकाने के बयान को भी तृणमूल नेता अभी तक नहीं पचा पाए हैं और गाहे-बगाहे दोनों दलों में बयानबाज़ी होती रहती है. बताने की ज़रूरत नहीं कि अगले चुनावों में जीत के लिए हर हालत में ममता को कांग्रेस का साथ चाहिए.

ज़ाहिर है, इस तरह का माहौल ममता के सोनार बांग्ला गढ़ने के सपने पर भी भारी पड़ेगा. राज्य की विकास दर का रुख़ गिरावट की ओर है. आंकड़े बताते हैं कि 2001-2002 में राज्य की विकास दर 7.8 प्रतिशत थी. फरवरी 2002 में ही जारी एक रिपोर्ट में भविष्यवाणी की गई थी कि पश्चिम बंगाल देश के दो सर्वोच्च विकास दर वाले राज्यों में से एक होगा. उस समय इसकी विकास दर राष्ट्रीय आंकड़े से 1.1 प्रतिशत ज़्यादा थी. रिपोर्ट में बताया गया था कि 1998 से 2002 के बीच पश्चिम बंगाल में 400 मिलियन डॉलर की परियोजनाएं शुरू की गईं और यह निवेशकों का सर्वाधिक पसंदीदा राज्य बन गया. एसोसिएटेड चैंबर्स ऑफ कॉमर्स के एक अध्ययन के मुताबिक, 2001 से 2004 के बीच पश्चिम बंगाल का सकल घरेलू उत्पाद बढ़कर 15 प्रतिशत तक पहुंच गया था. ठीक इसी के बाद से राज्य की विकास दर में गिरावट का दौर शुरू हो गया. 11वीं पंचवर्षीय योजना के पहले साल में विकास दर 9 प्रतिशत थी और 2008-09 के वैश्विक वित्तीय संकट के कारण भले ही यह घटकर 6.7 प्रतिशत हो गई, पर 2009-10 में विकास दर का आंकड़ा 7.4 प्रतिशत तक पहुंचा.

इस संदर्भ में पड़ोसी राज्य बिहार की चर्चा करना ज़रूरी है. 2004-05 से 2008-09 के बीच के पांच सालों में बिहार को जो 11.05 प्रतिशत की विकास दर हासिल हुई, उसकी प्रवासी बिहारियों की कमाई से लेकर अन्य कई सारी वजहें हो सकती हैं, पर दो वजहें साफ़ दिखती हैं, अच्छी सड़कें और क़ानून व्यवस्था की बेहतर हालत. जहां तक बात बंगाल की है, यह सड़कों के मामले में कभी बदनाम नहीं रहा. यहां बेहतर सड़कें हैं और पर्याप्त बिजली भी. रही बात क़ानून व्यवस्था की, तो दशकों से ख़ासकर ग्रामीण इलाक़ों में पुलिस और प्रशासन पर माकपा के कॉडरों का ही ज़ोर चलता रहा है. पंचायतें माकपा की ग्रामीण इकाइयों की तरह तब तक काम करती रहीं, जब तक वहां ममता की अगुवाई में परिवर्तन की हवा नहीं पहुंची. नंदीग्राम में वाम सरकार की हिंसात्मक कार्रवाई क़ानून व्यवस्था के खूंखार पहलू का एक नमूना थी. इधर ममता के सिंगूर आंदोलन ने औद्योगिक विकास के पहिए को जैसे पंक्चर कर दिया. ज्योति बसु के कार्यकाल के आख़िरी पांच सालों में नई औद्योगिक नीति की वजह से जो हवा बनी, उस पर ममता के उग्र विपक्षवाद ने पानी फेर दिया. किसानों के हितों की रक्षा के नाम पर ममता ने जो हंगामा किया, उससे निवेशक बिदक गए और उन्हें अब भी आशंका है कि अगली मुख्यमंत्री बनने के बाद क्या वह राज्य में निवेश का एक बेहतर माहौल बना पाएंगी? अब जब ममता माकपा कॉडरों की बंदूक़ों का जवाब बंदूकों से देने के लिए ललकार रही हैं तो क़ानून व्यवस्था का तो भगवान ही मालिक होगा. इसी वजह से यह आशंका जताई जा रही है कि 2011 के विधानसभा चुनाव राज्य ही नहीं, पूरे देश में चुनावी हिंसा का रिकॉर्ड तोड़ेंगे. अमन का असर औद्योगिकीकरण पर भी पड़ता है. वैसे बंगाल की औद्योगिक दुर्गति के लिए एक हद तक वामपंथियों की पहले के 20-22 सालों की नीतियां ज़िम्मेदार हैं, जब श्रमिकों के हितों के नाम पर उग्र ट्रेड यूनियनवाद फुंफकारता रहा. बंद और हड़ताल बंगाल की दिनचर्या में शामिल थे. यह वही दौर था, जब बंगाल से उद्योगपतियों का पलायन शुरू हुआ. नुक़सान इतना ज़्यादा हुआ कि नई औद्योगिक नीति बनाने के बाद उठाए गए कदमों से एक हिस्से की भी भरपाई नहीं हो सकी. कहना न होगा कि 2002 की भविष्यवाणी तभी सच होती, जब विकास की रफ्तार अबाध गति से जारी रहती. तब संभव था कि आज दूसरे पायदान पर बिहार नहीं, बंगाल होता. इस तरह 2003-04 के लालू-राबड़ी राज में 5.15 प्रतिशत की नकारात्मक विकास दर से उबरने और दूसरे पायदान पर आने में बिहार को सिर्फ़ पांच साल लगे हैं.यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि नेतृत्व की राजनीतिक दुश्मनी का असर ज़मीन पर भी दिख रहा है. अब तक का इतिहास तो यही रहा है कि कम से कम दुर्गा पूजा के दौरान आठ-दस दिनों तक बंगाल में दलीय हिंसा ही नहीं, आपराधिक वारदातें भी कम हो जाती थीं, पर इस बार वैसा नहीं हुआ. कुछ इलाक़ों में मां दुर्गा के प्रति श्रद्धा और भक्ति के ज्वार पर राजनीतिक जमीन हथियाने की लपलपाती वासना भारी पड़ी. दुर्गा पूजा के ठीक चार दिन पहले उत्तर 24 परगना के बरासात के दो नंबर ब्लाक में अमीनपुर बाजार में पार्टी कार्यालय खुलने के समय कुछ अज्ञात लोगों ने पांच माकपा समर्थकों को गोली मारकर घायल कर दिया. कथित तौर पर हमलावर तृणमूल समर्थक थे. इसके बाद वहां संघर्ष शुरू हो गया और महानंद सरदार नामक एक तृणमूल कार्यकर्ता की हत्या कर दी गई. इस संघर्ष में माकपा के सफीकुल इस्लाम, सज्जाद अली, रउफ अली, रफीकुल इस्लाम एवं हसीबुर्रहमान गोली लगने से घायल हो गए. साधन मंडल और रजाउर दुगले नामक दो तृणमूल समर्थक भी गोली लगने से घायल हो गए. इसके साथ राज्य के दूसरे हिस्सों से भी छिटपुट हिंसा की ख़बरें आईं. हालात ऐसे हैं कि कोई भी दल अपने कॉडरों को क़ाबू में रखने में नाकाम है और चुनाव तक यह दुश्मनी कौन सी शक्ल अख्तियार करेगी, अनुमान लगाना मुश्किल नहीं है. बिहार और बंगाल में फ़िलहाल एक बात समान दिख रही है कि दोनों जगह बदलाव की हवा बह रही है. नीतीश ने कुछ बुनियादी क्षेत्रों में सुधार के ज़रिए इस परिवर्तन को एक लंबी पारी खेलने वाले जनाधार में बदला है. संभव है, इस बार के चुनावों में जनता उन्हें एक और मौक़ा दे. ममता के पास भी मौक़ा है कि वह वामपंथियों का सिर्फ़ एक बेहतर विकल्प बनने का ही नहीं, समाज के सभी वर्गों में विश्वास पैदा करने और विकास के एक व्यापक एजेंडे को सामने रखकर सकारात्मक रुख़ के साथ आगे बढ़ें. ध्यान रहे कि बंगाल की जनता उतनी त्रस्त नहीं है, जितनी बिहार की जनता राबड़ी राज में थी. अभी भी चुनाव में 7 माह बाकी हैं. पिछले लोकसभा चुनावों में 7.5 प्रतिशत वोटों के नुक़सान की भरपाई में वाममोर्चा जी-जान से लगा है. अगर वह आधे की भी भरपाई कर लेता है तो ममता हर हाल में अपनी जीत तय मानकर नहीं चल सकतीं. ऐसे में नकारात्मक गतिविधियों से परहेज़ करना ही उनकी राजनीतिक सेहत के लिए ठीक रहेगा.

feedback@chauthiduniya.com

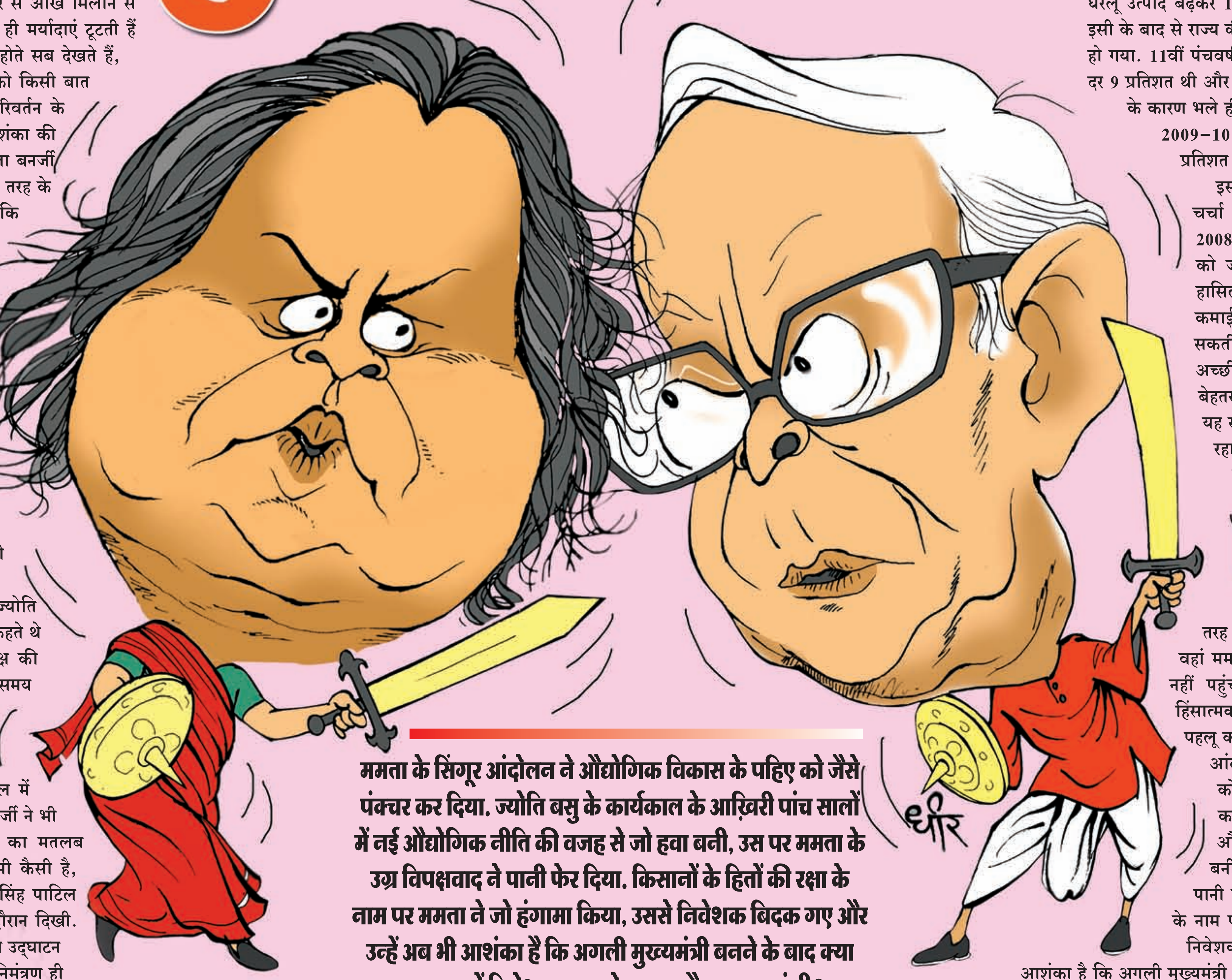

ममता के सिंगूर आंदोलन ने औद्योगिक विकास के पहिए को जैसे पंक्चर कर दिया. ज्योति बसु के कार्यकाल के आख़िरी पांच सालों में नई औद्योगिक नीति की वजह से जो हवा बनी, उस पर ममता के उग्र विपक्षवाद ने पानी फेर दिया. किसानों के हितों की रक्षा के नाम पर ममता ने जो हंगामा किया, उससे निवेशक बिदक गए और उन्हें अब भी आशंका है कि अगली मुख्यमंत्री बनने के बाद क्या वह राज्य में निवेश का एक बेहतर माहौल बना पाएंगी?

नवलगढ़ तहसील का सिगनौर ऐसा ही एक गांव है. यहां के तीन किसान परिवार इस योजना के तहत चुने गए हैं, जो अपने घर में आने वाले मेहमानों का स्वागत करते हैं.

शेखावाटी
बदलाव और कामयाबी का सफ़र जारी है

सभी फोटो-*प्रभात पाण्डेय*

शेखावाटी की सफलता की एक और कहानी. यह कहानी ग्राम विकास की है, जो भारी-भरकम सरकारी योजनाओं का सच सामने रखती है और जो विकास के लिए ज़रूरी नई नीतियों से भी रूबरू कराती है. वे नीतियां, जो दिल्ली द्वारा नहीं थोपी जातीं, बल्कि गांव से ही निकलती हैं और गांव के विकास के लिए ही बनती हैं, चाहे नदियों की सफ़ाई की बात हो या पर्यटन को बढ़ावा देने की.

शशि शेखर

क़रीब दो महीने से चौथी दुनिया आपको लगातार शेखावाटी के बदलते चेहरे के बारे में बता रहा है. अलग-अलग कहानियों के ज़रिए यह बताने की कोशिश की जा रही थी कि कैसे शेखावाटी विकास की नित नई इबारत लिख रहा है. जैविक खेती करने वाले किसानों ने अपनी सफलता की कहानी ख़ुद अपनी ज़ुबानी बताई. महिलाओं और युवतियों की कामयाबी ने साबित किया कि घूंघट उनके विकास में बाधक नहीं है. या फिर ग़रीब, विकलांग युवाओं को सौर ऊर्जा के इस्तेमाल के ज़रिए रोज़गार से जोड़ने की कहानी. इन कहानियों ने बताया कि कैसे आधुनिक विज्ञान और प्राचीन ज्ञान के इस्तेमाल से विकास की धारा को शेखावाटी की ओर मोड़ दिया गया. समग्र विकास के लिए शेखावाटी में किए गए प्रयोग अद्‌भुत हैं. मोरारका फाउंडेशन की सृजन क्षमता और प्रगतिशील सोच की वजह से न सिर्फ़ शेखावाटी, बल्कि पूरे राजस्थान में बदलाव की बयार महसूस की जा सकती है. साथ ही यह भी साबित हुआ कि आने वाले वक़्त में अगर इस देश के लिए विकास की कोई परिभाषा होगी तो वह कमोबेश शेखावाटी की सफलता से ही उधार ली जाएगी. गांव और ग्रामीणों के विकास के लिए हमारे देश के नीति निर्माताओं को विकास की वही परिभाषा अपनानी होगी, जो शेखावाटी में अपनाई गई है.

चौथी दुनिया अपने इस अंक में आपको शेखावाटी की कहानी की अंतिम कड़ी से रूबरू करा रहा है. हालांकि इसे अंतिम कड़ी फिर भी नहीं माना जा सकता. यह न सिर्फ़ ग्राम्य विकास की कहानी है, बल्कि यह भारी-भरकम सरकारी योजनाओं की पोल भी खोलती है. गंगा-यमुना को साफ़ करने के नाम पर केंद्र और राज्य सरकारें अब तक अरबों-खरबों रुपये बहा चुकी हैं, लेकिन नतीजा कुछ नहीं निकला. हालत यह है कि कुछ क्षेत्रों में आज गंगा का पानी पीने तो क्या, सिंचाई के लायक भी नहीं रहा. दूसरी ओर नवलगढ़ के मोरारका फाउंडेशन ने दूषित जल को साफ़ करके फिर से सिंचाई लायक बनाने का एक कारगर तरीक़ा निकाला है. यह तकनीक अन्य तकनीकों के मुक़ाबले न सिर्फ़ सस्ती है, बल्कि प्राकृतिक है और इकोफ्रेंडली भी. अन्य तकनीक (खासकर विदेशी) में जहां इस तरह के वाटर ट्रीटमेंट प्लांट बनाने में 50 से 60 लाख रुपये का ख़र्च आता है, वहीं प्राकृतिक तरीक़े से बनने वाला यह प्लांट महज़ 5-6 लाख रुपये में तैयार हो जाता है. इस प्लांट में बिजली की खपत भी न के बराबर है. दरअसल, नवलगढ़ के आम लोग भी बकरा मंडी में भरने वाले दूषित पानी की गंदगी और बदबू से परेशान थे. फाउंडेशन ने नगरपालिका की सहायता से गौशाला की 180 बीघा कृषि योग्य भूमि तक पाइप लाइन बिछवाई. इसके बाद इको फ्रेंडली वेस्ट वाटर रिसाइकलिंग तकनीक से दूषित पानी को शुद्ध बनाने का काम शुरू किया गया. फाउंडेशन ने इस तकनीक द्वारा 50 हज़ार लीटर प्रदूषित पानी को रिसाइकिल करके साफ़ कृषि योग्य पानी में बदलने का संयंत्र स्थापित किया. घरों से निकला गंदा पानी अब बकरा मंडी के तालाब में मिलकर सीधे गौशाला की ज़मीन पर बने संयंत्र में आ जाता है और वहां से शोधित होकर गौशाला की 50 बीघा असिंचित ज़मीन पर सिंचाई के लिए इस्तेमाल किया जाता है.

इस खास तकनीक की कुछ विशेषताएं भी हैं. मसलन यह पर्यावरण के अनुकूल है. इस संयंत्र में गंदे पानी के शोधन के लिए किसी भी तरह के ख़तरनाक या हानिकारक रसायन का प्रयोग नहीं किया जाता है. इसके सभी फिल्टर प्राकृतिक तरीक़े और सहज उपलब्ध वस्तुओं से तैयार किए गए हैं. इस संयंत्र को चलाने के लिए बहुत कम या कहें कि लगभग न के बराबर बिजली की ज़रूरत होती है. मतलब यह तकनीक ऊर्जा बचाने में भी कारगर है. इस संयंत्र के रखरखाव पर बहुत कम ख़र्च आता है और मेहनत भी कम लगती है. इसे चलाने के लिए किसी विशेष प्रशिक्षण की ज़रूरत नहीं होती. किसी भी पढ़े-लिखे व्यक्ति को साधारण प्रशिक्षण देकर इस लायक बनाया जा सकता है कि वह इसे चला सके. ज़ाहिर है, इस तकनीक का इस्तेमाल उन सभी जगहों पर किया जा सकता है, जहां घरों आदि से दूषित जल बड़ी मात्रा में निकलता है और यूं ही बर्बाद हो जाता है. महानगरों में तो यह बात आम है. यदि सरकार चाहे तो वह बड़े शहरों में इस तकनीक का इस्तेमाल कर सकती है. बहरहाल, इस तकनीक को सरकारी एजेंसियां अपनाती हैं या नहीं, इस बारे में कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती, लेकिन शेखावाटी ने पर्यटन के क्षेत्र में जो नया प्रयोग किया है, वह भी सरकारी एजेंसियों के लिए किसी सीख से कम नहीं है. राजस्थान में आजकल ग्रामीण पर्यटन काफ़ी ज़ोर पकड़ रहा है. इसमें भी शेखावाटी का नाम सबसे पहले आता है. अकेले नवलगढ़ तहसील के कई गांवों में ग्रामीण पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए कई प्रयोग किए जा रहे हैं. फाउंडेशन ने पूरे राजस्थान में लगभग 500 ग्रामीण परिवारों को इसके लिए प्रशिक्षित किया है. फाउंडेशन से जुड़े लोग बताते हैं कि पिछले तीन सालों में हज़ारों राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय पर्यटक गांवों में आकर रुक चुके हैं. अकेले नवलगढ़ में ही कई गांवों का विकास ग्रामीण पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए किया जा रहा है.

नवलगढ़ तहसील का सिगनौर ऐसा ही एक गांव है. यहां के तीन किसान परिवार इस योजना के तहत चुने गए हैं, जो अपने घर में आने वाले मेहमानों का स्वागत करते हैं, उनके खाने-पीने और घूमने का इंतजाम करते हैं. बदले में इन परिवारों को उचित पैसा भी मिलता है. सिगनौर को ग्रामीण पर्यटन के लिए आदर्श गांव के रूप में विकसित किया जा रहा है. जिन परिवारों को इस योजना के लिए चयनित किया गया है, वहां इस बात का ध्यान भी रखा गया है कि पर्यटक गांव की परंपराओं, खानपान और संस्कृति का भी आनंद उठा सकें. इस तरह ग्रामीण पर्यटन को बढ़ावा देकर मोरारका फाउंडेशन ग्रामीण परिवारों को रोज़गार के अवसर भी उपलब्ध करा रहा है. शेखावाटी में ग्रामीण पर्यटन के विकास-विस्तार को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि केंद्र और राज्य सरकारों को इस ओर पर्याप्त ध्यान देना चाहिए, ताकि न सिर्फ़ भारतीय पर्यटन को बढ़ावा मिले, बल्कि भारतीय गांव ख़ुद आर्थिक रूप से सशक्त होने के साथ-साथ भारतीय परंपरा का प्रचार-प्रसार भी कर सकें. भारत पर अक्सर सेक्स टूरिज्म का आरोप लगता रहा है. यौन शोषण-बाल शोषण को लेकर गोवा जैसे प्रसिद्ध पर्यटन स्थल हमेशा बदनाम रहे हैं. भारतीय पर्यटन उद्योग पर लगे इस धब्बे को लेकर केंद्रीय पर्यटन मंत्री कुमारी शैलजा चिंतित हैं और उन्होंने सभी राज्यों के मुख्यमंत्रियों को पत्र लिखकर पर्यटन आचार संहिता लागू करने का आग्रह किया है तथा इसके लिए केंद्रीय सहायता देने की भी बात कही है. यहां सवाल यह है कि असल भारतीय संस्कृति को पर्यटन (ग्रामीण पर्यटन) से जोड़ने की दिशा में फाउंडेशन की इन तमाम कोशिशों की तरफ़ क्या पर्यटन मंत्रालय अपेक्षित ध्यान देगा?

shashishekhar@chauthiduniya.com

इन योजनाओं के बारे में अधिक जानकारी और सहायता के लिए संपर्क करें

वी.बी. बापना
महा प्रबंधक
मोरारका फाउंडेशन, वाटिका रोड, जयपुर-302015
मोबाइल-09414063458
ईमेल-vbmorarka@yahoo.com.

चौथी दुनिया

मीडिया बार-बार यह बता रहा था कि खेलों की शुरुआत से पहले तैयारियां पूरी नहीं हो पाएंगी.

उत्तराधिकार की राजनीति

मेघनाद देसाई

ब्रिटेन में लेबर पार्टी को नया नेता मिल गया है. मई 2010 में बहुमत खोने के बाद गार्डन ब्राउन ने इस्तीफ़ा दे दिया था और इसके ठीक बाद उनके उत्तराधिकारी के चुनाव की प्रक्रिया शुरू हो गई थी. लेबर पार्टी के नियमों के मुताबिक़ केवल संसद सदस्य ही पार्टी के नेता पद का चुनाव लड़ सकते हैं. नामांकन करने के बाद उम्मीदवार पूरे देश में घूमकर पार्टी सदस्यों के सामने अपना पक्ष रखते हैं. इस बार पांच उम्मीदवारों ने नामांकन दाखिल किया था, जिनमें चार की उम्र 40 से 50 वर्ष के बीच थी, जबकि एकमात्र महिला उम्मीदवार की उम्र 50 वर्ष से ज़्यादा थी. तीन महीने तक चले प्रचार अभियान के बाद संसद सदस्यों, पार्टी कॉडर और ट्रेड यूनियनों ने मतदान में हिस्सा लिया. कड़े मुक़ाबले में अंत में 40 वर्षीय एडवर्ड मिलिबैंड अपने बड़े भाई डेविड मिलिबैंड को हराकर पार्टी के नए नेता चुने गए. इस परिणाम की घोषणा पार्टी के एक अधिवेशन में की गई, जिसमें दलीय नीतियों पर विस्तार से चर्चा हुई. कंजरवेटिव पार्टी का अधिवेशन भी इसी बीच आयोजित हुआ, जिसमें बजट घाटे को कम करने संबंधी प्रस्ताव को पार्टी के सदस्यों के सामने रखा गया. प्रस्ताव के पक्ष और विपक्ष में तर्क रखे गए और जमकर बहस हुई.

अब इसकी तुलना ज़रा भारत के साथ कीजिए. भारत में राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र नाम की कोई चीज ही नहीं है. पार्टी में नेतृत्व के लिए चुनाव नहीं होता, केवल मनोनयन होता है. इसका सबसे बड़ा उदाहरण कांग्रेस है, जिसने काफ़ी पहले ही निर्वाचित नेतृत्व की परंपरा को तिलांजलि दे दी थी. पार्टी अध्यक्ष पद के लिए आख़िरी बार जब चुनाव हुए थे तो जितेंद्र प्रसाद ने सोनिया गांधी को चुनौती दी थी, लेकिन इसके साथ ही उनके राजनीतिक करियर का अंत हो गया. फ़िलहाल हालत यह है कि बिना किसी चुनाव के सोनिया गांधी एक बार फिर अध्यक्ष चुनी जा चुकी हैं और अब हमें प्रतीक्षा उस दिन की करनी चाहिए, जबकि राहुल गांधी को इस पद के लिए चुना जाएगा. कोई संदेह नहीं कि राहुल को अध्यक्ष बनने के लिए न तो कोई चुनाव लड़ना होगा, न ही अपनी नीतियों-विचारों को जनता के सामने रखना होगा. वंशवाद के विरोध का दावा करने वाली भारतीय जनता पार्टी की हालत भी ज़्यादा अलग नहीं है. पार्टी के वर्तमान अध्यक्ष नितिन गडकरी चुनकर नहीं आए हैं, बल्कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा थोपे गए हैं. समाजवादी पार्टी और राष्ट्रीय जनता दल जैसी पार्टियों का तो आधार ही परिवारवाद है, फिर आंतरिक दलीय लोकतंत्र से भला उनका क्या लेना-देना हो सकता है.

क्या किसी देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था स्वस्थ हो सकती है, यदि वहां की राजनीतिक पार्टियां ख़ुद ही दलीय लोकतंत्र का इस्तेमाल न करती हों? वंशवाद सामंती अवधारणा है, चाहे वह उत्तर कोरिया में हो या भारत में. परिवारवाद उतना बुरा नहीं है, ब्रिटेन में भी लेबर पार्टी के नेता पद के लिए हुए चुनाव में दो भाई एक-दूसरे के ख़िलाफ़ खड़े थे, लेकिन फ़र्क़ इतना है कि वह अपने पिता की राजनीतिक विरासत के लिए नहीं लड़ रहे थे, बल्कि नीतिगत मुद्दों पर अपने विचारों को जनता के सामने रख रहे थे. भारत में राजनीतिक विचारों पर कभी सार्वजनिक बहस नहीं होती. टेलीविजन न्यूज चैनलों पर होने वाली बहसों में पार्टी प्रतिनिधियों के बीच केवल तू-तू मैं-मैं होती है, एक-दूसरे पर आरोप लगाए जाते हैं. भारत में राजनीति का मतलब अलग-अलग राजनीतिक विचारधाराओं के बीच संघर्ष या देश के बेहतर भविष्य को लेकर वैकल्पिक नीति नहीं है. इसका एकमात्र मतलब किसी भी क़ीमत पर सत्ता हासिल करना और संरक्षणवाद को बढ़ावा देना है. संरक्षणवाद से पैसा पैदा होता है, जिसका फिर से राजनीति में इस्तेमाल किया जा सकता है. महाराष्ट्र का मुख्यमंत्री होने का फ़ायदा यह है कि राज्य में होने वाली पार्टी की किसी रैली के लिए आप दो करोड़ रुपये आसानी से दे सकते हैं. कोई आपसे यह नहीं पूछेगा कि यह पैसा कहां से आया. इसका एक और उदाहरण हाल के दिनों में कर्नाटक विधानसभा में देखने को मिला. इस राजनीतिक उथल-पुथल की एकमात्र वजह यह थी कि राज्य में भाजपा की सरकार है, जबकि केंद्र में सत्ता पर क़ाबिज़ कांग्रेस यह दिखाना चाहती थी कि पैसे के बल पर दलबदल कराने में वह किसी भी दूसरे राजनीतिक दल को पीछे छोड़ सकती है. राज्यपाल को दलीय राजनीति से अलग रहना चाहिए, लेकिन वास्तव में ऐसा होता नहीं है. भारतीय संविधान का निर्माण भले ही संविधान सभा द्वारा किया गया हो, लेकिन राज्यपाल के अधिकार अभी भी वही हैं, जो अंग्रेजों के जमाने में थे और वे लोकतंत्र की भावनाओं के अनुरूप नहीं हैं. राज्यपाल को यह अधिकार है कि वह राज्य की चुनी हुई सरकार को बर्ख़ास्त कर सकता है, जबकि देश का राष्ट्रपति केंद्र सरकार के साथ ऐसा नहीं कर सकता. यह विरोधाभास क्यों है?

कर्नाटक की हालिया घटनाएं देश की संघीय व्यवस्था के लिए ख़तरे का संकेत हैं. जब संविधान को तैयार किया गया था तो यही माना गया था कि केंद्र और सभी राज्यों में कांग्रेस की ही सरकार होगी. आज़ादी के बाद के कुछ सालों तक यही हुआ भी, लेकिन इसके बाद सबसे पहले केरल में वाम मोर्चे की सरकार बनी, पर इंदिरा गांधी के दबाव के चलते थोड़े दिनों बाद ही वह गिर गई. इसके बाद से केंद्र की सत्ता पर क़ाबिज़ राजनीतिक दल धारा 370 का बार-बार ग़लत इस्तेमाल करता रहा. चूंकि कांग्रेस सबसे ज़्यादा समय तक केंद्र में सत्तारूढ़ रही है तो इस मामले में उसका रिकॉर्ड सबसे ज़्यादा ख़राब रहा है. लगातार दो बार से सत्ता में रहने के चलते उसकी पुरानी ग़लत आदत एक बार फिर सतह पर आने लगी है. भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश ज़रूर है, लेकिन सवाल है कि क्या यह सबसे अच्छा भी है?

feedback@chauthiduniya.com

शुरू हो गया खेल के बाद का असली खेल

डी आर आहूजा

राष्ट्रमंडल खेलों का आयोजन असफल होने या उसे रद्द किए जाने की भविष्यवाणी करने वाले लोग आज बगलें झांक रहे हैं. खेलों की शुरुआत से पहले अख़बारों और टीवी चैनलों पर तमाम तरह की ख़बरें आ रही थीं कि तैयारियां पूरी नहीं हैं और लोग यह कयास लगाने लगे थे या यूं कहें कि मनाने लगे थे कि इसका आयोजन न हो. लेकिन खेलों के सफल आयोजन के बाद आज वे सारी भविष्यवाणियां ग़लत साबित हो चुकी हैं. 3 अक्टूबर को जब इन खेलों की शुरुआत हुई थी तो कई लोग आसमान टूटने की भविष्यवाणी कर रहे थे, लेकिन 14 अक्टूबर को इसके समापन तक ऐसा कुछ भी नहीं हुआ. स्टेडियम की छतें नहीं गिरीं, न ही गंदगी के चलते कोई बीमारी फैली और न ही सुरक्षा में ख़ामी का कोई मामला सामने आया. आतंकी हमलों की बात तो दूर, खेलगांव में परिंदा भी पर नहीं मार सका. इससे पहले मीडिया ने मानो राष्ट्रमंडल खेलों के आयोजन के ख़िलाफ़ अभियान ही शुरू कर दिया था.

मीडिया बार-बार यह बता रहा था कि खेलों की शुरुआत से पहले तैयारियां पूरी नहीं हो पाएंगी. ऐसी ख़बरों से घबरा कर कई देश इसमें भाग लेने से इंकार करने की धमकियां देने लगे, लेकिन अंत में राष्ट्रमंडल में शामिल सभी 71 देशों ने इसमें हिस्सा लिया. अच्छी बात यह रही कि खेलों के दौरान कोई समस्या नहीं आई, सब कुछ शांतिपूर्वक संपन्न हो गया. यदि कोई छोटी-मोटी समस्या आई भी तो लोगों ने उस पर ध्यान नहीं दिया. रही-सही कसर भारतीय खिलाड़ियों के शानदार प्रदर्शन ने पूरी कर दी. भारत के एथलीट जिस तरह एक के बाद एक पदक अपने नाम करते गए, आयोजन समिति के प्रति आम लोगों का गुस्सा खेलों की शुरुआत के बाद रोमांच और गर्व में तब्दील होता गया. किसी ने यह उम्मीद नहीं की थी कि भारत 36 स्वर्ण पदकों सहित कुल 101 पदक जीतेगा और पदक तालिका में दूसरे नंबर पर रहेगा.

ओलंपिक पदक विजेता एवं फ्लाइंग सिख के नाम से मशहूर मिल्खा सिंह और पूर्व केंद्रीय मंत्री मणि शंकर अय्यर ने यह दावा किया था कि भारत एक भी पदक नहीं जीत पाएगा, लेकिन अब उनके पास अपने बयानों पर शर्मिंदा होने के अलावा और कोई चारा नहीं है. खेलों की शुरुआत से पहले अधूरी तैयारियों की बात तो जैसे लोग भूल चुके हैं. फिर भी इसमें कोई संदेह नहीं कि खेलों के आयोजन के लिए ज़िम्मेदार अधिकारियों एवं राजनेताओं को भ्रष्टाचार और वित्तीय अनियमितताओं के आरोपों के मद्देनज़र जांच का सामना करना होगा. राष्ट्रमंडल खेलों के आयोजन को पूरी दुनिया के सामने भारत की बढ़ती हैसियत के उदाहरण के रूप में पेश किया गया था, लेकिन तैयारियों में हुई देरी ने यह साबित कर दिया कि देश की नौकरशाही सरकार के शोपीस इवेंट के आयोजन में कितनी अक्षम है. हमारे सरकारी तंत्र की सारी कमज़ोरियां सतह पर आ गईं, लेकिन क्या हम इससे कोई सबक लेंगे? इस तरह के खेलों का आयोजन राष्ट्रीय गौरव की बात होती है और पूरी दुनिया के सामने देश की बढ़ती ताक़त का प्रदर्शन करने का एक ज़रिया भी, लेकिन हमारे सरकारी तंत्र ने सब कुछ गुड़-गोबर करने में कोई कसर नहीं छोड़ी.

बहरहाल, राष्ट्रमंडल खेलों के सफल आयोजन से उत्साहित आयोजन समिति के अध्यक्ष सुरेश कलमाडी अब एशियाड और ओलंपिक के आयोजन के लिए दावेदारी पेश करने की सोच रहे हैं, लेकिन इसके लिए उन्हें पहले ख़ुद पर लग रहे भ्रष्टाचार के आरोपों से बाहर निकलना होगा. खेलों के समापन के ठीक बाद कलमाडी और दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित के बीच आरोप-प्रत्यारोप का नया दौर शुरू हो गया है. आश्चर्य की बात तो यह है कि दोनों ही पक्षों ने भ्रष्टाचार और वित्तीय अनियमितताओं के ख़िलाफ़ जांच का स्वागत किया और इसमें पूरा सहयोग करने का आश्वासन भी दिया है. शीला दीक्षित ने कहा कि शक़ की सुई आयोजन समिति की ओर घूमती है, जिसके मुखिया सुरेश कलमाडी हैं. खेलों के आयोजन के लिए केंद्र सरकार ने क़रीब 1600 करोड़ रुपये का क़र्ज़ उपलब्ध कराया था और यदि कोई अनियमितता हुई है तो वह इसी राशि के इस्तेमाल में हुई है. उन्होंने हालांकि दिल्ली सरकार के कुछ विभागों में भी भ्रष्टाचार से इंकार नहीं किया.

दूसरी ओर सुरेश कलमाडी ने कहा कि आयोजन समिति को बेवजह बलि का बकरा बनाया जा रहा है. इस आयोजन के लिए जरूरी आधारभूत संरचना का विकास सरकारी एजेंसियों को करना था. दिल्ली शहर की ख़ूबसूरती और इसे बेहतर बनाने की ज़िम्मेदारी राज्य सरकार की थी. आयोजन समिति का एकमात्र दायित्व खेलों का संचालन था. समिति प्रधानमंत्री द्वारा नियुक्त जांच समिति और अन्य केंद्रीय जांच समितियों को हरसंभव सहयोग देने के लिए तैयार है. इस बीच नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक और केंद्रीय सतर्कता आयोग जैसी एजेंसियों ने आयोजन समिति के खिलाफ वित्तीय अनियमितताओं के आरोपों की दोबारा जांच शुरू कर दी है. केंद्रीय एवं राज्य सेवा के सभी ऐसे अधिकारी, जिन्हें प्रतिनियुक्ति पर भेजा गया था, उन्हें फ़िलहाल अपने पद पर बने रहने के लिए कहा गया है. आयोजन समिति के अधिकारियों को यह निर्देश दिया गया है कि वह पैसों के लेनदेन से संबंधित फाइलों को पूरी तरह तैयार करें और उन्हें सुरक्षित रखें. खेलों की समाप्ति के साथ ही आयोजन समिति की गतिविधियां भी सीमित हो गई हैं. इसके कुल 1700 कर्मचारियों में से क़रीब अस्सी प्रतिशत को 30 अक्टूबर से पहले ही हटाया जा चुका है. समिति ने अपने कार्यों के संचालन के लिए एनडीएमसी से भवन किराए पर लिया था और इसके लिए वह हर माह 5.36 करोड़ रुपये बतौर किराया भुगतान कर रही थी. समिति ने अब इस भवन की तीन मंजिलें ही अपने पास रखने का फ़ैसला किया है.

(लेखक द ट्रिब्यून के ब्यूरो चीफ रह चुके हैं)

feedback@chauthiduniya.com

जनता की जीत

आवरण कथा कश्मीर: जनता जीती-राजनीति हारी (18-24 अक्टूबर) ने काफ़ी प्रभावित किया. लेखक ने कश्मीर के हालात और नागरिकों की सार्थक पहल पर बख़ूबी प्रकाश डाला है. वाकई अगर वहां अमन-चैन का माहौल बना है तो उसके लिए अवाम ही बधाई की पात्र है. सियासी ताक़तों को मुंह की खानी पड़ी. यह अवाम की जीत है और यह लोकतंत्र की जीत है. सियासी ताक़तों को सबक लेना चाहिए कि अवाम को अब यह अच्छी तरह मालूम हो गया है कि उसके लिए क्या सही है और क्या ग़लत. अब उसे और बहलाया-फुसलाया, ठगा नहीं जा सकता.

-निशीत कुमार शर्मा, *सुतरखाना, कानपुर, उत्तर प्रदेश.*

मुख्यधारा में मुसलमान

18-24 अक्टूबर के अंक में प्रकाशित आलेख-मुख्यधारा में कैसे आएं मुसलमान पढ़ा, अच्छा लगा. यह एक ऐसा गंभीर मुद्दा है, जिस पर अर्से से बहस चल रही है, लेकिन अभी तक कोई समाधान सामने नहीं आ पाया है. सच तो यह है कि विभिन्न सियासी दल आज तक मुसलमानों के नाम पर सिर्फ़ अपने राजनीतिक स्वार्थ सिद्ध करते रहे हैं, लेकिन उन्हें सम्मानजनक स्थिति में लाने की पहल कोई करता नहीं दिखता.

-रणजीत सैनी, *चंडीगढ़, पंजाब.*

बिहार और दलबदलू नेता

4-10 अक्टूबर के अंक में प्रकाशित आलेख-रूठे सांसद बिगाड़ेंगे खेल के अंतर्गत लेखक ने बिहार के मौजूदा परिदृश्य की वास्तविक स्थिति को बख़ूबी बयान किया है. सच भी यही है कि दलबदल का ड्रामा ज़ोरों पर है. नेताओं की नज़र में सिर्फ़ एक ही लक्ष्य रह गया है कि चाहे जिस तरह बन पड़े, बस चुनाव जीतना है. जिन्हें अपने दल से टिकट नहीं मिला, वे बिना किसी संकोच-शर्म के दूसरे दल में चले गए हैं. जो नहीं गए, वे दल में रहकर दल की ही जड़ें काट रहे हैं. उधर महंगाई और भ्रष्टाचार से त्रस्त जनता सब कुछ दम साधे देख-सुन रही है.

-शंकर शर्मा, *चिलमिल, बेगूसराय, बिहार.*

बॉलीवुड का सच

बॉलीवुड: बर्बाद होता पैसा शीर्षक से प्रकाशित आलेख गहन शोध पर आधारित प्रतीत होता है. यह बॉलीवुड की कई सच्चाइयों को सामने लाता है. सच तो यही है कि बॉलीवुड की सफलता के पीछे किसी एक शख्स का नहीं, पूरी इंडस्ट्री का योगदान है. आगे भी हमें ऐसे ही शोधपरक आलेखों का इंतज़ार रहेगा.

-रोहित बनर्जी, *ई-मेल से.*

ग़रीब हर जगह उपेक्षित

ग़रीबों का तो कहीं भी ख्याल नहीं रखा जाता, न बजट बनाते वक़्त और न सहायता बांटते वक़्त. देश को अगर बुलंदी तक ले जाना है तो सबसे पहले ग़रीबी को हटाना होगा, लेकिन जो भी सरकार आती है, वह ग़रीबी तो हटा नहीं पाती, ग़रीबों को ज़रूर हटा देती है. अगर सरकार को वाकई ग़रीबों की चिंता हो जाए तो ग़रीबी ख़त्म होने में देर नहीं लगेगी. देश से बाहर जाने वाले माल पर अगर सरकार टैक्स कम रखे तो आपूर्ति बढ़ेगी और रोज़गार भी बढ़ेगा. चीन का विश्व के हर बाज़ार पर कब्ज़ा है. वह सस्ता माल दुनिया भर में बेच रहा है. यह काम हम भी कर सकते हैं, लेकिन सरकार की ग़लत नीतियों के कारण ऐसा नहीं हो पा रहा है.

-आफताब, *ई-मेल से.*

गंगा के नाम पर राजनीति

पूरे देश में गंगा नदी के नाम पर राजनीतिक रोटियां सेंकी जा रही हैं. हर कोई ख़ुद को गंगा का हितैषी, संरक्षक और समर्थक साबित करने पर तुला है. जबकि किसी की भी नीयत पूरी तरह साफ़ नहीं है और बात गंगा की सफ़ाई और संरक्षण की हो रही है. केंद्र और राज्य सरकारों को चाहिए कि वे गंगा को लेकर अपने निज स्वार्थों की सिद्धि करने वाली ताक़तों को सबक सिखाएं और इस राष्ट्रीय नदी के संरक्षण का काम अपने हाथों से संपन्न करें. इस काम में व्यवधान डालने वालों से सख्ती से निपटा जाना चाहिए. कोई भी बाबा-साधु क़ानून से बड़ा नहीं है. बाबा रामदेव को भी क़ानून की मर्यादा का ध्यान रखना चाहिए और यह नहीं भूलना चाहिए कि गंगा हर देशवासी की मां है.

-राजकुमार, *देहरादून, उत्तराखंड.*

सरकारी उदासीनता

डेंगू जैसी महामारी पर विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित करने के लिए चौथी दुनिया को मुबारकबाद. जिस दर्द और बेबाकी के साथ आपने इसे पेश किया, वह काबिले तारीफ है. सरकार सच छुपा रही है. आपने उस पर रोशनी डाली. ओखला के लोग खासे परेशान हैं. आपके बाद दूसरे अख़बारों में भी यह मसला उठा, लेकिन सरकार की तरफ से कोई सार्थक कदम नहीं उठाया गया. कई लोग आज भी इस महामारी से पीड़ित हैं.

-मोहम्मद अब्दुल बारी, *दिल्ली.*

आप अपने स्वतंत्र विचार तथा प्रतिक्रियाएं हमें इसी पते पर भेजें. संपादक, चौथी दुनिया, एफ-2, सेक्टर-11 नोएडा, (उत्तर प्रदेश) पिन-201301
ई-मेल पता : feedback@chauthiduniya.com

जब तोप मुक़ाबिल हो

संतोष भारतीय

सत्ता की चाबी अगड़ी नहीं, पिछड़ी जाति के पास है

बिहार में विधानसभा चुनाव में अगड़ी जाति का वोट किसे मिलेगा, इस पर सबकी नजर है. किस गठबंधन को कितनी सीटें मिलेंगी, इसका आकलन इस बात पर टिका है कि ब्राह्मण, राजपूत, भूमिहार और कायस्थ किसे वोट देंगे. दरअसल इस बार के चुनाव में सत्ता की चाबी अगड़ी जाति नहीं, पिछड़ी जाति के पास है. पिछड़ी जातियां संख्या में पहले से ही ज़्यादा हैं, लेकिन चुनावों में उनकी मौजूदगी कम थी. बिहार की चुनावी राजनीति में बदलाव हो रहा है. इस चुनाव में जातीय समीकरण का एक नया अध्याय शुरू हो रहा है, जिसके दूरगामी राजनीतिक परिणाम के संकेत मिल रहे हैं.

दूसरे किसी भी राज्य से बिहार की राजनीति में जाति का महत्व ज़्यादा है. बिहार ग़रीब है, पिछड़ा है, यहां बेरोज़गारी है, जीविका के लिए सबसे ज़्यादा बिहार के लोग दूसरे राज्यों में जाते हैं. चुनावी राजनीति में बाहुबलियों और अपराधियों का बोलबाला है. बिहार के चुनाव पर जब भी बात होती है तो इन्हीं मुद्दों पर ज़्यादातर विश्लेषकों का ध्यान जाता है. हर बार की तरह इस बार भी चुनाव में जाति का अहम रोल रहा है. पिछड़ी जातियों के सशक्तिकरण के नज़रिए से बिहार देश का सबसे प्रगतिशील राज्य है. बिहार में ऊंची जाति के सांसदों की संख्या 1952 में 56.4 फ़ीसदी थी, जो 2004 में घटकर 27.5 फ़ीसदी हो गई, वहीं पिछड़ी जाति के सांसदों की संख्या 1952 में 5.5 फ़ीसदी थी, जो 2004 में बढ़कर 37.5 फ़ीसदी हो गई. बिहार देश का अकेला राज्य है, जहां 15 साल से ज़्यादा पिछड़ी जाति का मुख्यमंत्री रहा है. बिहार की राजनीति में पिछड़ी जातियों का सशक्तिकरण हुआ है. पिछड़ी जातियों का एक उच्च वर्ग है, जो राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से काफ़ी मज़बूत है. लालू यादव ने अपने शासनकाल में जातीय शोषण का ख़ात्मा करने के बजाय उसे सत्ता में बने रहने का एक औजार बनाया. लालू यादव ने सामाजिक न्याय का मतलब ही बदल दिया. यह कहना ग़लत नहीं है कि लालू यादव ने जातीय शोषण का औजारीकरण कर दिया. पंद्रह साल के शासनकाल में सामाजिक विकास सरकार के दायरे से बाहर ही रहा. सामाजिक न्याय का अर्थ शोषण को ख़त्म करने की जगह सवर्णों को सत्ता से बाहर रखना हो गया. पिछड़ी जातियों के आर्थिक और सामाजिक विकास की दिशा में लालू यादव ने कोई ध्यान नहीं दिया. इसका नतीजा यह हुआ कि पिछड़ी जातियों, दलितों और मुसलमानों, जो राष्ट्रीय जनता दल के समर्थक थे, ने लालू यादव को छोड़ दिया. यही वजह है कि 2005 के चुनाव में सेकुलर डेमोक्रेटिक फ्रंट हार गया. इस फ्रंट में राष्ट्रीय जनता दल, कांग्रेस, एनसीपी और सीपीएम जैसी पार्टियां थीं. लालू यादव की स्थिति इसलिए कमज़ोर हुई, क्योंकि पार्टी में पिछड़ी जाति के विधायकों की संख्या घट गई.

1995 की जीत के बाद बाद लालू यादव ने सामाजिक न्याय का नारा दिया और वह पिछड़ी जातियों, दलितों और महिलाओं के समर्थन से चुनाव जीतने में कामयाब हुए, लेकिन किसानों की समस्याओं पर उनकी सरकार ने ध्यान नहीं दिया. भोजपुर, जहानाबाद और पलामू जैसे क्षेत्रों में किसान आंदोलन करने लगे, जिसे बलपूर्वक दबाया गया. इसका नतीजा यह हुआ कि 2000 के चुनाव में लालू यादव की पार्टी की 49 सीटें घट गईं. राष्ट्रीय जनता दल 124 सीटों पर सिमट गया. इस चुनाव में पिछड़ी जाति के विधायकों की संख्या में कमी आई. इसी तरह अनुसूचित जाति के विधायकों की संख्या में भी कमी आई. भारतीय जनता पार्टी की वजह से ऊंची जाति के विधायकों की संख्या बढ़ी, लेकिन भाजपा ने पिछड़ी जातियों, ख़ासकर यादवों को अपनी ओर आकर्षित करने की कोशिश की, जिसका उसे फ़ायदा मिला. भारतीय जनता पार्टी के विधायकों में 10.4 फ़ीसदी यादव हैं, जो राजपूतों के बाद सबसे बड़ा समूह था. नवंबर 2000 में झारखंड को अलग कर दिया गया. बिहार की राजनीति से अनुसूचित जनजातियों का सफ़ाया हो गया. इससे दो बदलाव हुए. एक तो बिहार की राजनीति में पिछड़ी जातियों की पकड़ मज़बूत हो गई और दूसरा यह कि पिछड़ी और अगड़ी जाति के बीच ध्रुवीकरण और भी साफ़ हो गया. फरवरी 2005 के चुनाव में लालू यादव 74 सीटों पर सिमट गए. रामविलास पासवान को 29 सीटें मिलीं और एनडीए गठबंधन को 92 सीटें हासिल हुईं. किसी की सरकार नहीं बनी, लेकिन इस चुनाव में पिछड़ी जाति के विधायकों की संख्या घटी और ऊंची जाति के विधायकों की संख्या में 4.9 फ़ीसदी का इज़ाफ़ा हुआ. इसकी मुख्य वजह लोक जनशक्ति पार्टी थी. 2005 के चुनाव में लालू यादव और रामविलास पासवान की दुश्मनी की वजह यह रही कि मुस्लिमों और दलितों के गठजोड़ से लालू यादव का मुक़ाबला करने निकले रामविलास पासवान की पार्टी के 30 फ़ीसदी उम्मीदवार ऊंची जाति के थे. सिर्फ़ 20 फ़ीसदी उम्मीदवार मुसलमान और दलित थे. इसलिए लोजपा में ऊंची जाति के विधायक बहुमत में आ गए और एक भी मुसलमान चुनाव नहीं जीत सका. रामविलास पासवान बिहार की राजनीति में पिछड़ी जाति के महत्व का सही आकलन नहीं कर सके, इसलिए जब नवंबर में चुनाव हुआ तो उन्हें फरवरी जैसी सफलता नहीं मिली.

जब नवंबर 2005 में चुनाव हुए तो एनडीए को 144 सीटें मिलीं और वह सरकार बनाने में कामयाब हुआ. जब सरकार बनी तो नीतीश कुमार ने पिछड़ी जातियों के साथ-साथ ऊंची जातियों के लोगों को भी सरकार में हिस्सेदारी दी. विधानसभा के अंदर पावर का एक नया समीकरण उभरा. 2000 चुनाव के बाद से सभी जातियों की तालिका बदली, लेकिन सिर्फ़ मुसलमान अकेले रह गए, जिनकी सीटें कम हुईं.

जब नवंबर 2005 में चुनाव हुए तो एनडीए को 144 सीटें मिलीं और वह सरकार बनाने में कामयाब हुआ. जब सरकार बनी तो नीतीश कुमार ने पिछड़ी जातियों के साथ-साथ ऊंची जातियों के लोगों को भी सरकार में हिस्सेदारी दी. विधानसभा के अंदर पावर का एक नया समीकरण उभरा. 2000 चुनाव के बाद से सभी जातियों की तालिका बदली, लेकिन सिर्फ़ मुसलमान अकेले रह गए, जिनकी सीटें कम हुईं. लालू यादव की हार का नतीजा यह हुआ कि बिहार में यादव विधायकों की संख्या घट गई, लेकिन कुर्मी और कोयरी की सीटें बढ़ गईं. यही दोनों जातियां जनता दल यूनाइटेड की मुख्य समर्थक हैं. नीतीश सरकार पिछड़ी जातियों के वर्चस्व को चुनौती देने वाली सरकार नहीं, बल्कि पिछड़ी जातियों को मज़बूत करने वाली सरकार रही. इसकी वजह यह भी है कि चाहे वह भारतीय जनता पार्टी हो, जनता दल यूनाइटेड हो या फिर राष्ट्रीय जनता दल, हर पार्टी में पिछड़ी जाति के विधायकों की संख्या सबसे ज़्यादा है. बिहार की राजनीति में आज यह कहा जा सकता है कि जो दल पिछड़ी जाति के उम्मीदवारों को जितने ज्यादा टिकट देगा, उसे उतनी ही ज़्यादा सीटें मिलेंगी. वही दल सरकार बनाएगा. बिहार की राजनीति का यह नया चेहरा सामने आ रहा है. इसे चुनाव में जातीय समीकरण की नई शुरुआत कहा जा सकता है. अच्छी बात यह है कि पिछड़ी जातियों में कई जातियों की हिस्सेदारी है. विभिन्न राजनीतिक दलों ने इस नए समीकरण को समझते हुए अपने-अपने उम्मीदवार खड़े किए हैं, लेकिन फ़ैसला बिहार की जनता के हाथ में है.

संपादक
editor@chauthiduniya.com

अयोध्या निर्णय : गुनाह करो, ईनाम पाओ

इलाहाबाद उच्च न्यायालय की लखनऊ बेंच ने अयोध्या मामले में 30 सितंबर 2010 को फ़ैसला सुनाया. आशंकाओं के विपरीत उस दिन और उसके बाद देश में कहीं हिंसा नहीं हुई. इसका श्रेय आमजनों की परिपक्व सोच को जाता है. जहां तक इस निर्णय का सवाल है, यह तीनों पक्षकारों यानी रामलला विराजमान, निर्मोही अखाड़ा एवं सुन्नी वक़्फ़ बोर्ड के बीच संतुलन क़ायम करने की कवायद के अलावा कुछ नहीं है. विवादित भूमि को तीन भागों में बांट दिया गया है और तीनों पक्षकारों को बराबर-बराबर ज़मीन दे दी गई है. अदालत ने यह भी कहा है कि चूंकि हिंदुओं की आस्था के अनुसार बाबरी मस्जिद के बीच के गुंबद के ठीक नीचे भगवान राम का जन्मस्थल है, इसलिए वह हिस्सा हिंदुओं को दिया जाना चाहिए. फ़ैसले से उत्साहित आरएसएस प्रमुख ने घोषणा की है कि अब विवादित भूमि पर भव्य राम मंदिर बनाने का रास्ता साफ़ हो गया है और इस राष्ट्रीय कार्य में सभी पक्षों को अपना सहयोग देना चाहिए.

इस मामले में मुलायम सिंह यादव की प्रतिक्रिया बिल्कुल ठीक है. उनका कहना है कि मुसलमान ख़ुद को ठगा सा महसूस कर रहे हैं. पहले उनकी मस्जिद में रात के अंधेरे में कुछ शरारती तत्व ज़बरदस्ती घुसकर रामलला की मूर्तियां स्थापित कर देते हैं, फिर एक योजनाबद्ध षड्यंत्र के तहत संघ परिवार उस मस्जिद को ही ज़मींदोज कर देता है और अब न्यायालय ने संघ के उस दावे पर अपनी मुहर लगा दी है कि भगवान राम उसी स्थान पर जन्मे थे. ऐसा लगता है कि इतिहास के वैज्ञानिक, अध्ययन में रत अध्येता अपना समय और ऊर्जा बर्बाद कर रहे हैं. उनके ज्ञान की किसी को कोई आवश्यकता ही नहीं है. इतिहास और पुरातत्व विज्ञान चाहे कुछ भी कहता रहे, कोई भी राजनीतिक शक्ति किसी भी आधारहीन तथ्य को आस्था का जामा पहना देगी और फिर उस आस्था के अनुरूप ग़ैर क़ानूनी कार्य करेगी और अंतत: अदालत उसके आपराधिक कृत्यों को इस आधार पर सही ठहरा देगी कि वे समाज के एक हिस्से की आस्था पर आधारित हैं! इस देश के जो नागरिक हमारे स्वाधीनता संग्राम और भारतीय संविधान के मूल्यों में आस्था रखते हैं, उनके लिए यह अकल्पनीय है कि कोई अदालत इस तरह का भी निर्णय दे सकती है.

संघ परिवार ने 1980 के दशक में राममंदिर आंदोलन का पल्ला थामा. उसने अत्यंत योजनाबद्ध तरीक़े से हिंदुओं के एक तबके को यह विश्वास दिला दिया कि भगवान राम ठीक उसी स्थान पर पैदा हुए थे, जहां बाबरी मस्जिद स्थित थी. दिलचस्प बात यह है कि चंद सदियों पहले तक राम हिंदुओं के प्रमुख देवता नहीं थे. वह मध्यकाल में प्रमुख हिंदू देवता बने, विशेषकर गोस्वामी तुलसीदास द्वारा राम की कहानी को सामान्य जनों की भाषा अवधी में प्रस्तुत करने के बाद. तब तक वाल्मीकि की संस्कृत रामायण प्रचलन में थी और चूंकि संस्कृत श्रेष्ठि वर्ग की भाषा थी, इसलिए राम के पूजकों की संख्या अत्यंत सीमित थी. ब्राह्मण तुलसीदास से बहुत नाराज़ थे, क्योंकि उन्होंने ब्राह्मणों की देवभाषा संस्कृत की जगह जनभाषा अवधी में रामकथा लिखी. जिस समय विवादित भूमि पर स्थित कथित राम मंदिर को तोड़ा गया था, उस समय तुलसीदास की आयु लगभग 30 वर्ष रही होगी. क्या यह आश्चर्यजनक नहीं कि तुलसी जैसे अनन्य रामभक्त ने अपने लेखन में कहीं इस बात की चर्चा नहीं की है कि उनके आराध्य के जन्मस्थल पर बने मंदिर को एक आतातायी बादशाह ने गिरा दिया है. यह साफ़ है कि शासक, चाहे वे किसी भी धर्म के रहे हों, केवल सत्ता और संपत्ति के उपासक थे. कई मौक़ों पर वे युद्ध में पराजित राजा को अपमानित करने के लिए उसके राज्य में स्थित पवित्र धर्मस्थलों को नष्ट करते थे, परंतु इसके पीछे केवल राजनीति होती थी, धर्म नहीं. अंग्रेजों ने अपनी फूट डालो और राज करो की नीति के तहत इतिहास की इन घटनाओं को इस रूप में प्रस्तुत किया कि मुस्लिम राजाओं ने हिंदू धर्म का अपमान करने के लिए हिंदू मंदिर ध्वस्त किए. सांप्रदायिक दृष्टिकोण से लिखे गए इसी इतिहास ने दोनों समुदायों को एक-दूसरे का शत्रु बना दिया और यही बैर भाव आगे जाकर सांप्रदायिक हिंसा का कारण बना. बाबरी मस्जिद एक संरक्षित स्मारक थी, जिसकी सुरक्षा की ज़िम्मेदारी भारत सरकार की थी. भारत सरकार न तो 1949 में वहां ग़ैर क़ानूनी ढंग से स्थापित रामलला की मूर्तियों को हटवा सकी और न ही 1992 में मस्जिद पर संघ परिवार के हमले को रोक सकी. भारत सरकार की ये दो बड़ी असफलताएं थीं. अयोध्या मामले में हालिया निर्णय से आरएसएस के देश को सांप्रदायिक आधार पर ध्रुवीकृत करने के एजेंडे को बढ़ावा मिलेगा. इस निर्णय ने रामलला की मूर्तियों की स्थापना को वैधता प्रदान की और बाबरी मस्जिद को ढहाए जाने के अपराध को नज़रअंदाज़ किया है. संघ परिवार को अपने गुनाहों का शानदार ईनाम मिला है. अब आरएसएस और उसके सहयोगी संगठन यह कह रहे हैं कि मुसलमानों को अपने हिस्से की ज़मीन हिंदुओं को सौंप देनी चाहिए, ताकि भव्य राम मंदिर बनाकर राष्ट्रीय महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति की जा सके. हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि भारत केवल हिंदुओं का नहीं है. साथ ही यह भी कि सभी हिंदू इस बात में विश्वास नहीं करते कि विवादित स्थल भगवान राम की जन्मभूमि है और न ही सभी हिंदू वहां राम मंदिर बना देखना चाहते हैं. अधिकांश हिंदू राम जन्मभूमि मुद्दे से दूर रहे हैं और उन्हें अत्यंत क्षोभ है कि आम हिंदुओं की राम में आस्था का दुरुपयोग भाजपा को सत्ता दिलाने के लिए किया गया. जबसे राम मंदिर चुनावी मुद्दा बना, अधिकतर हिंदुओं ने कभी राम मंदिर के एजेंडे का समर्थन नहीं किया. हिंदुओं का एक तबका अवश्य राम मंदिर का समर्थक है, परंतु विभिन्न चुनावों के परिणामों से साफ है कि बहुसंख्यक हिंदू राम मंदिर के एजेंडे के साथ नहीं हैं. हाल में किए गए कुछ सर्वेक्षणों से यह सामने आया है कि हिंदुओं के एक बहुत छोटे हिस्से के लिए राम मंदिर एक मुद्दा है. युवा पीढ़ी को राम मंदिर से कोई लेना-देना नहीं है, और विशेषकर ऐसे राम मंदिर से, जिसे देश पर दो अपराधों के ज़रिए थोपा जा रहा हो.

कांग्रेस इस मुद्दे को मिल-बैठकर सुलझाने की बात कर रही है. संवाद के ज़रिए इस मुद्दे का क्या हल निकाला जा सकता है? पहली बात तो यह है कि कोई भी हल न्यायपूर्ण होना चाहिए और उसमें सभी संबंधित पक्षकारों के अधिकारों को मान्यता मिलनी चाहिए. कोई भी समझौता केवल लेनदेन के आधार पर हो सकता है. क्या जो लोग मुस्लिम समुदाय से सहयोग और समझौता करने के लिए कह रहे हैं, वे यह वादा कर सकते हैं कि उसके बाद देश में मुसलमानों को सुरक्षा और समानता मिलेगी? मुस्लिम समुदाय सामाजिक और आर्थिक मानकों पर पिछड़ता जा रहा है. क्या सच्चर समिति और रंगनाथ मिश्र आयोग की सिफ़ारिशें बिना किसी देरी के लागू की जाएंगी? क्या आरएसएस राम मंदिर के बदले यह सब देने के लिए तैयार है? क्या इसके बाद भारत में मुसलमान सुरक्षित रहेंगे? मुसलमान भारत की आबादी का केवल 13.4 प्रतिशत हैं, परंतु दंगों में मारे जाने वालों में से 80 प्रतिशत मुसलमान होते हैं. क्या मुसलमानों के सहयोग से अयोध्या में भव्य राम मंदिर बनने के बाद आरएसएस अपने शिशु मंदिरों में मुसलमानों के ख़िलाफ़ घृणा फैलाने वाली पाठ्य पुस्तकें पढ़ाना बंद कर देगा?

इस तरह के समझौते में कोई समस्या नहीं है, बल्कि यह बहुत अच्छा होगा अगर अयोध्या में राम मंदिर के बदले ईसाई और मुस्लिम अल्पसंख्यकों को देश में समानता का दर्जा मिल जाए, अगर उनके ख़िलाफ़ किया जा रहा आधारहीन दुष्प्रचार बंद कर दिया जाए और अगर सरकार प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के इस वादे पर अमल करने के लिए तैयार हो जाए कि देश के संसाधनों पर मुस्लिम अल्पसंख्यकों का समान हक़ है. क्या राम मंदिर बनाने में सहयोग के बदले सांप्रदायिक दंगों के दोषियों को सज़ा मिलना सुनिश्चित किया जाएगा? दिल्ली के सिख विरोधी दंगों और मुंबई-गुजरात की मुस्लिम विरोधी हिंसा के लिए दोषी लोग आज भी छाती फुलाए घूम रहे हैं. क्या उन्हें उनके कुकर्मों की सज़ा दिलाना उस बातचीत से निकाले जाने वाले हल का हिस्सा होगा? क्या मुसलमानों से त्याग की अपेक्षा करने के पहले भारतीय राज्य यह गारंटी नहीं देना चाहेगा कि देश में क़ानून का राज रहेगा और उन्हें पूरी सुरक्षा और आगे बढ़ने के समान अवसर मिलेंगे? यह साफ है कि राम मंदिर मुद्दे का इस्तेमाल भारतीय संविधान की आत्मा को आहत और विभिन्न समुदायों के बीच सद्भाव को ख़त्म करने के लिए किया जाता रहा है. अल्पसंख्यकों से त्याग करने की अपील तो हम सब कर सकते हैं, परंतु हम सभी को यह मालूम है कि उन्हें इस त्याग के बदले कुछ नहीं मिलेगा.

सांप्रदायिकता हमारे देश की सामूहिक सोच में इतनी मज़बूत जड़ें जमा चुकी है कि मुसलमानों को दूसरे दर्जे का नागरिक बना दिया गया है. हिंदू राष्ट्र के पैरोकार और हिंदुत्व की राजनीति के झंडाबरदार मुसलमानों को कभी शांति और गरिमा से नहीं रहने देंगे.आरएसएस के लिए रोटी, कपड़ा एवं मकान जैसी मूलभूत आवश्यकताएं कम महत्वपूर्ण हैं और अपनी राजनीति को आगे बढ़ाने के लिए राम मंदिर, राम सेतु एवं गौ हत्या जैसे काल्पनिक मुद्दे अधिक. यह सचमुच अत्यंत दु:खद है कि समाज और राजनीति का इस हद तक सांप्रदायीकरण हो चुका है कि एक राजनीतिक धारा विशेष द्वारा प्रायोजित आस्था न्यायिक निर्णयों का आधार बन रही है. हम केवल उम्मीद कर सकते हैं कि युवा पीढ़ी और वे सब, जो भारतीय संविधान में विश्वास करते हैं, संकीर्ण पहचान की राजनीति से दूरी बनाएंग. उस राजनीति से, जो धार्मिक आस्था को सत्ता तक पहुंचने का शॉर्टकट बनाना चाहती है. हमें उम्मीद है कि हम ऐसे समाज को बनाने में सफल होंगे, जहां सबको न्याय मिलेगा और समाज के पिछड़े वर्गों के साथ विशेष रियायत बरती जाएगी.

राम पुनियानी
feedback@chauthiduniya.com
(लेखक आईआईटी मुंबई के पूर्व प्राध्यापक हैं)

नियम तोड़ने वालों के ख़िलाफ़ जब चालान और ज़ुर्माने से बात नहीं बनी तो यातायात पुलिस ने शहर के बुद्धिजीवियों एवं मनोवैज्ञानिकों से बात की.

सूचना आयोग और उनके पते

सूचना का अधिकार
जानने का अधिकार जीने का अधिकार
चौथी दुनिया की पहल

इस अंक में हम विभिन्न राज्य सूचना आयोग और केंद्रीय सूचना आयोग के पते प्रकाशित कर रहे हैं, ताकि किसी भी आरटीआई आवेदक को द्वितीय अपील या शिकायत करने के लिए परेशान न होना पड़े. हम आपको यह भी बता रहे हैं कि कब, कैसे और किन हालात में सूचना आयोग का दरवाज़ा खटखटाना चाहिए. यदि आपको सूचना न मिले या आप प्राप्त सूचना से संतुष्ट न हों तो अपीलीय अधिकारी के पास सूचना का अधिकार अधिनियम के अनुच्छेद 19 (1) के तहत एक अपील दायर कर सकते हैं. अगर वहां से भी सूचना न मिले तो ऐसी स्थिति में द्वितीय अपील के माध्यम से सूचना प्राप्त करना अंतिम विकल्प है. द्वितीय अपील सूचना आयोग के पास दायर की जा सकती है. केंद्र सरकार के विभागों के विरुद्ध केंद्रीय सूचना आयोग है और राज्य सरकार के विभागों के विरुद्ध राज्य सूचना आयोग है. प्रथम अपील के निष्पादन के 90 दिनों के भीतर या उस तारीख़ के 90 दिनों के भीतर जब तक प्रथम अपील निष्पादित होनी थी, द्वितीय अपील दायर की जा सकती है.

वैसे तो प्रथम/द्वितीय अपील के लिए कोई शुल्क नहीं है, लेकिन कुछ राज्य सरकारों ने शुल्क का प्रावधान किया है. अगर आपको ग़लत सूचना मिलती है या पीआईओ आपके आवेदन को स्वीकार नहीं करता है तो आप सीधे शिकायत दर्ज करा सकते हैं. आप अपना आवेदन/ शिकायत डाक द्वारा भी भेज सकते हैं. यह शिकायत संबंधित सूचना आयोग को अनुच्छेद 18 के तहत की जा सकती है. सूचना आयुक्त को उस अधिकारी पर 25000 रुपये का अर्थदंड लगाने का अधिकार है, जिसने आपका आवेदन लेने से मना किया था.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

यदि आपने सूचना क़ानून का इस्तेमाल किया है और अगर कोई सूचना आपके पास है, जिसे आप हमारे साथ बांटना चाहते हैं तो हमें वह सूचना निम्न पते पर भेजें. हम उसे प्रकाशित करेंगे. इसके अलावा सूचना का अधिकार क़ानून से संबंधित किसी भी सुझाव या परामर्श के लिए आप हमें ईमेल कर सकते हैं या हमें पत्र लिख सकते हैं.
हमारा पता है :

चौथी दुनिया
एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा (गौतमबुद्ध नगर) उत्तर प्रदेश, पिन -201301
ई-मेल : rti@chauthiduniya.com

यहां भेजें अपनी अपील/शिकायत

राज्य	सूचना आयुक्त	पता	फोन नंबर
आंध्र प्रदेश	सी डी अरहा	एचपीसीए भवन, पब्लिक गार्डेन के सामने, हैदराबाद-4	09949099801, 040-23407309
असम	आर एस मुशहरि	दिसपुर, जनता भवन, गुवाहाटी-6	09435406175, 0361-2261676
अरुणाचल प्रदेश		अरुणाचल प्रदेश सचिवालय एनेक्सी, ब्लॉक-234, ईटानगर-791111	0360-2212582
बिहार	मुख्य सूचना आयुक्त	4-फ्लोर, सूचना भवन, (नए सचिवालय के सामने) पटना-1	09430007500, 0612-2235466
छत्तीसगढ़	ए के विजयवर्गीय	निर्मल छाया भवन, मीरा दातर रोड, शंकर नगर, रायपुर-492007	0771-4024406, 0771-2442132
गोवा	ए वेंकटरामण	श्रम शक्ति भवन, ग्राउंड फ्लोर, पणजी, गोवा-403401	09860287282, 0832-2437880
गुजरात	आर एन दास	1-फ्लोर, ब्यूरो ऑफ इकनॉमिक्स एंड स्टेटिस्टिक्स बिल्डिंग, सेक्टर-18, गांधीनगर-382018	079-23252701, 079-23230993
हरियाणा	जी माधवन	एससीओ नं-70/71, सेक्टर-8 सी, मध्य मार्ग, चंडीगढ़	0172-2726568, 0172-2783834
हिमाचल प्रदेश	पी एस राणा	एचपी गवर्नमेंट सचिवालय, शिमला-171002	
झारखंड	हरीशंकर प्रसाद	राज्य सूचना आयोग, इंजीनियर हॉस्टल, धुर्वा, रांच	09431364947, 0651-2401418
कर्नाटक	के के मिश्रा	कर्नाटक सूचना आयोग विधानसौध बंगलुरू-560001	080-22253651, 080-22256003 (फैक्स)
केरल	पलात मोहनदास	केरल राज्य सूचना आयोग, पुनेन रोड, तिरुअनंतपुरम-695039	04712333147, 04712330920 (फैक्स)
मध्य प्रदेश	पी पी तिवारी	बी-22, छर इमली, भोपाल-42016	04755-2761366, 2761367 04755-2761368 (फैक्स)
महाराष्ट्र	मुख्य सूचना आयुक्त	3-फ्लोर, न्यू एडमिनिस्ट्रेटिव बिल्डिंग, मंत्रालय, मुंबई-400032	022-22856078, 22793103 022-22049390 (फैक्स)
मणिपुर	एस सुंदरलाल सिंह	ओल्ड सचिवालय, इंफाल-795001	0385-2220981
मेघालय	जी पी व्हंग	मेघालय सचिवालय, शिलांग-1	0364-2223945, 0364-2225978 (फैक्स)
उड़ीसा	धीरेंद्र नाथ पादी	उड़ीसा सूचना आयोग, स्टेट गेस्ट हाउस, कमरा नंबर-44, यूनिट-5, भुवनेश्वर	06742475400, 2535404 (फैक्स)
पंजाब	मुख्य सूचना आयुक्त	एससीओ-84/85, सेक्टर-17 सी, चंडीगढ़	0172-4630050, 0172-4630052 (फैक्स)
राजस्थान	मो. कॉरानी	योजना भवन, 1-फ्लोर, तिलक मार्ग, जयपुर 0141-2224855	
तमिलनाडु	एस रामाकृष्णन	89, डॉ. अल्गप्पा रोड, पूरासाई वाल्कम, चेन्नई-84	044-26403355, 2435781
त्रिपुरा	बी के चक्रवर्ती	पं. नेहरू कांपलेक्स (गोरखा बस्ती), अगरतला-799006	0381-2218021, 0381-2216269 (फैक्स)
उत्तराखंड	आर एस तोलिया	सेक्टर-1, सी-10, डिफेंस कॉलोनी, देहरादून-248001	0135-2666778
उत्तर प्रदेश	मुख्य सूचना आयुक्त	6-फ्लोर, इंदिरा भवन, लखनऊ-226001	0522-2288598, 2288600, 0522-2236655
पश्चिम बंगाल	अरुण भट्टाचार्य	रायटर बिल्डिंग, कोलकाता-700001	

केंद्रीय सूचना आयोग

केंद्रीय सूचना आयोग	पता	फोन नंबर
ए एन तिवारी (मुख्य सूचना आयुक्त)	क्लब बिल्डिंग, ओल्ड जेएनयू कैंपस बेरसराय, नई दिल्ली-110067	011-26717354

आवेदनपत्र (कूड़ेदान साफ़ क्यों नहीं होता)

सेवा में,
लोक सूचना अधिकारी
(विभाग का नाम)
(विभाग का पता)

विषय : सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 के तहत आवेदन

महोदय,
कूड़ेदान का पता.......

उपर्युक्त कूड़ेदान से संबंधित निम्नलिखित सूचनाएं उपलब्ध कराएं :

1. उस डिपो का पता बताएं, जहां से लोडर और ट्रक इस कूड़ेदान के लिए भेजे जाते हैं?
2. उन लोडरों एवं ट्रकों के नंबर बताएं, जो इस कूड़ेदान से कूड़ा उठाने के लिए नियुक्त हैं?
3. दिनांक ....से ....के बीच डिपो के बीट रजिस्टर में दर्ज इन गाड़ियों के डिपो छोड़ने तथा डिपो में वापस आने केसमय का पूरा विवरण उपलब्ध कराएं?
4. उन सभी कूड़ेदानों का पता बताएं, जहां का कूड़ा उपर्युक्त समय के दौरान इन गाड़ियों ने उठाया?
5. इस दौरान प्रतिदिन इन गाड़ियों द्वारा लगाए गए चक्करों का विवरण दें?
6. इस दौरान प्रत्येक चक्कर में इन गाड़ियों द्वारा उठाए गए कूड़े केवजन का विवरण दें?
7. उपर्युक्त कूड़ादान पिछले.......दिनों से साफ़ नहीं किया गया है. इस दौरान इस क्षेत्र के सेनेटरी इंस्पेक्टर द्वारा भेजी गई प्रतिदिन की बैलेंस रिपोर्ट की प्रति उपलब्ध कराएं?
8. क्या उपर्युक्त बैलेंस रिपोर्ट में इस बात का उल्लेख है कि इस दौरान कूड़ेदान का कूड़ा नहीं उठाया गया? यदि नहीं, तो संबंधित सेनेटरी इंस्पेक्टर ने इसका उल्लेख क्यों नहीं किया?

मैं आवेदन शुल्क के रूप में 10 रुपये अलग से जमा कर रहा/रही हूं.
या मैं बीपीएल कार्डधारक हूं, इसलिए सभी देय शुल्कों से मुक्त हूं. मेरा बीपीएल कार्ड नंबर............है.

यदि मांगी गई सूचना आपके विभाग/कार्यालय से संबंधित न हो तो सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 की धारा 6 (3) का संज्ञान लेते हुए मेरा आवेदन संबंधित लोक सूचना अधिकारी को पांच दिनों की समयावधि के अंतर्गत हस्तांतरित करें. साथ ही अधिनियम के प्रावधानों के तहत सूचना उपलब्ध कराते समय प्रथम अपील अधिकारी का नाम और पता अवश्य बताएं.

भवदीय
नाम......
पता......
फोन नं......

संलग्नक :
(यदि कुछ हो)

ज़रा हट के

पुरानी बांसुरी खोलेगी राज़

आमतौर पर दुनिया भर के खोजकर्ता ऐसी चीजों की खोज करते रहते हैं, जिनसे पुरानी संस्कृतियों-सभ्यताओं के मूल का पता चलता है. जर्मनी में खोजकर्ताओं ने एक लगभग 35 हज़ार साल पुरानी बांसुरी खोज निकाली है. उनका कहना है कि यह दुनिया का पहला संगीत यंत्र हो सकता है. यह बांसुरी गिद्ध की हड्डी को तराश कर बनाई गई है. दक्षिणी जर्मनी में होल फेल्स की गुफ़ाओं से इसे निकाला गया है. यह उस समय की है, जब आधुनिक मानव जाति यूरोप में बसना शुरू हुई थी. बांसुरी के इस्तेमाल से पता लगता है कि उस समय समाज संगठित हो रहा था और उसमें सृजन करने की क्षमता थी. विशेषज्ञों का यह भी कहना है कि इससे यह पता लगाने में भी मदद मिल सकती है कि उस समय जाति का अस्तित्व कैसे बचा रहा. तूबिंजेन विश्वविद्यालय के पुरातत्व विज्ञानी निकोलस कोनार्ड ने बताया कि यह बांसुरी बीस सेंटीमीटर लंबी है और इसमें पांच छेद बनाए गए हैं. इस बांसुरी के अलावा हाथी दांत निर्मित दो अन्य बांसुरियों के अवशेष भी मिले हैं. अब तक इस इलाक़े से आठ बांसुरियां मिली हैं. कोनार्ड कहते हैं, ज़ाहिर है कि उस समय भी समाज में संगीत का काफी महत्व था.

नियम तोड़ने की सज़ा फ़िल्म

कभी-कभी कुछ गलतियों की सज़ा मज़ेदार लगती है. अगर यातायात के नियम तोड़ने पर आपको ज़ुर्माना भरने के बजाय दो घंटे की कोई फ़िल्म देखने की सज़ा मिले तो कैसा लगेगा? आप सोच रहे होंगे कि यह सज़ा किसी मज़े से कम नहीं है, लेकिन जिन्होंने अब तक यह सज़ा भुगती है, उन्होंने कम से कम यातायात के नियम तोड़कर भविष्य में ऐसी फ़िल्म देखने से तौबा कर ली है. असल में यातायात के नियम तोड़ने वालों से परेशान छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर के यातायात विभाग ने ऐसे लोगों से निपटने का एक अनूठा तरीका अपनाया है. राजधानी रायपुर में अब यातायात के नियम तोड़ने वालों को पूरे दो घंटे तक थाने में बैठकर यातायात के नियमों पर आधारित फ़िल्म देखनी पड़ रही है. नियम तोड़ने वालों के ख़िलाफ़ जब चालान और ज़ुर्माने से बात नहीं बनी तो यातायात पुलिस ने शहर के बुद्धिजीवियों एवं मनोवैज्ञानिकों से बात की. बैठकों के दौर चले और फिर शुरू हुआ यातायात के नियम तोड़ने वालों को थाने में ज़बरदस्ती दो घंटे तक बैठाकर यातायात के नियमों पर आधारित फ़िल्म दिखाने का यह अनूठा प्रयोग. इसके लिए दिल्ली समेत अलग-अलग राज्यों से यातायात के नियमों को लेकर बनाई गई फ़िल्में मंगाई गईं. रायपुर के यातायात उपाधीक्षक बलराम हिरवानी बताते हैं, इसकी प्रेरणा हमें आंध्र प्रदेश से मिली, जहां इससे मिलती-जुलती पहल की गई थी. रायपुर में हमें इसके सकारात्मक परिणाम मिल रहे हैं और पहले ही दिन क़रीब 150 लोगों को यह फ़िल्म दिखाई गई. हिरवानी का मानना है कि अगर कोई आदमी किसी ज़रूरी काम से जा रहा हो और यातायात के नियम तोड़ने की सज़ा के तौर पर उसे पूरे दो घंटे थाने में बैठाकर फ़िल्म दिखाई जाए तो वह भविष्य में नियम तोड़ने से बाज आएगा. सज़ा के तौर पर फ़िल्म देख रहे पारस पाठक का मानना है कि अगर इस योजना को ईमानदारी से लागू किया जाए तो लोगों में इसका गहरा प्रभाव पड़ेगा, लेकिन इस तरह की योजनाएं लंबे समय तक शायद ही चल पाएं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

राशिफल

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल): मांगलिक कार्यों के लिए किए जा रहे प्रयास फलीभूत होंगे. साधना में सफलता मिलेगी. शिक्षा प्रतियोगिता के क्षेत्र में आशातीत सफलता के योग हैं. धन, पद एवं प्रतिष्ठा के प्रति सचेत रहें. आर्थिक क्षेत्र में किया जा रहा प्रयास सफल रहेगा.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई): स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें. आर्थिक योजना को बल मिलेगा. मैत्री संबंध प्रगाढ़ होंगे. जीवनसाथी का भरपूर सहयोग एवं सानिध्य मिलेगा. पिता या उच्चाधिकारी से तनाव मिल सकता है. व्यर्थ की भागदौड़ रहेगी. किसी के लड़ाई-झगड़े में न उलझें.

मिथुन (21 मई से 20 जून): गृहोपयोगी वस्तुओं में वृद्धि होगी. किसी अभिन्न मित्र से मिलाप होगा, जिससे मिलकर प्रसन्नता का एहसास होगा. खाने में संयम रखें, उदर विकार या किसी अन्य प्रकार की परेशानी का सामना करना पड़ सकता है. आय के नए अवसर प्राप्त होंगे.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई): पारिवारिक जीवन सुखमय होगा. स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें. बेरोज़गार लोगों को रोज़गार मिलने की संभावना है. उपहार-सम्मान का लाभ मिलेगा. संतान के दायित्व की पूर्ति होगी. अर्से से लंबित कार्य पूरा हो जाएगा. सामाजिक कार्यों में व्यस्त रहेंगे.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त): मैत्री संबंध प्रगाढ़ होंगे. संतान के संबंध में सुखद समाचार मिलेगा. जीवनसाथी के स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें. मौसमी रोगों से पीड़ित हो सकते हैं. ससुराल पक्ष से वैचारिक मतभेद हो सकते हैं. आर्थिक पक्ष मज़बूत होगा.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर): वाद-विवाद की स्थिति आपके लिए हितकर नहीं होगी. टकराव की स्थिति टालना आपके लिए हितकर होगा. यात्रा-देशाटन के अवसर सुखद एवं लाभप्रद रहेंगे. मनोरंजन के अवसर प्राप्त होंगे. व्यर्थ की भागदौड़ रहेगी.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्टूबर): शासन-सत्ता का सहयोग मिलेगा. सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी. रुका हुआ धन प्राप्त होगा. व्यवसायिक योजना को बल मिलेगा. शिक्षा प्रतियोगिता के क्षेत्र में आशातीत सफलता मिलेगी. मन प्रसन्न रहेगा. मित्रों के साथ बाहर घूमने का कार्यक्रम बनेगा.

वृश्चिक (21 अक्टूबर से 20 नवंबर): आय-व्यय में संतुलन बनाकर रखें, अन्यथा आर्थिक संकट का सामना करना पड़ सकता है. ऊर्जा से ओतप्रोत रहेंगे. प्रणय संबंधों में प्रगाढ़ता आएगी. किया गया परिश्रम सार्थक होगा. रचनात्मक कार्यों के लिए किए जा रहे प्रयास सफल होंगे.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर): परिवार के सदस्यों का सहयोग मिलेगा. वाणी की सौम्यता आपको लाभ दिलाएगी. व्यवसायिक दिशा में किए गए प्रयास फलीभूत होंगे. साथियों का सहयोग मिलेगा. स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें. अचानक कहीं यात्रा पर जाना पड़ सकता है.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी): नए अनुबंध मिलने के योग हैं. कोई भी महत्वपूर्ण निर्णय न लें. शिक्षा प्रतियोगिता की दिशा में किए जा रहे प्रयास फलीभूत होंगे. संतान के संबंध में सुखद समाचार मिलेगा. विरोधी परास्त होंगे.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी): यात्रा मनोरंजक एवं सुखद रहेगी. स्वास्थ्य में शिथिलता रहेगी. भाग्य के भरोसे किसी भी कार्य का निर्णय न लें. टकराव या तनाव की स्थिति उत्पन्न हो सकती है. आर्थिक पक्ष मज़बूत होगा. पेट से संबंधित शिक़ायत हो सकती है.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च): किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति से मुलाक़ात होगी, जिससे आपको लाभ होगा. धन लाभ की संभावना है. व्यवसायिक-पारिवारिक समस्या आ सकती है. मनोरंजन के अवसर प्राप्त होंगे. धन, पद एवं प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी.

पंडित सुदर्शन
feedback@chauthiduniya.com

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अमेरिका अभी भी भारत से बहुत आगे है. इसकी वजह यह है कि अमेरिका दूसरे देशों को आर्थिक मदद उपलब्ध कराने में कोई कोताही नहीं करता, लेकिन नई तकनीकों के मामले में उसका रवैया काफ़ी संकुचित है.

भारत में ओबामा करने को बहुत कुछ है

भारत के परिप्रेक्ष्य में ओबामा के 22 महीनों के कार्यकाल की सबसे बड़ी ख़राबी यह रही है कि अमेरिकी प्रशासन को यही नहीं पता कि दोनों देशों के बीच संबंधों का स्वरूप कैसा हो. नवंबर 2009 में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की अमेरिका यात्रा के दौरान आतंकवाद के ख़िलाफ़ संयुक्त अभियान की शुरुआत के अलावा ओबामा के कार्यकाल में ऐसा कुछ नहीं हुआ, जिससे भारत उत्साहित हो.

आदित्य पूजन

बराक ओबामा जब अमेरिका में राष्ट्रपति पद के लिए अपना चुनाव प्रचार कर रहे थे तो उनका नारा था, चेंज वी कैन बिलीव इन. मतलब यह कि बदलाव ऐसा हो, जिसमें हम विश्वास कर सकें. उनका यह नारा अमेरिकी जनता को भा गया और वह अफ़्रीकी मूल के पहले राष्ट्रपति बनने में कामयाब रहे. उनके इस निर्वाचन से केवल अमेरिका ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया में एक नई उम्मीद और जोश का संचार हुआ. आख़िर वह परंपराओं को तोड़कर विश्व की एकमात्र महाशक्ति के मुखिया चुने गए थे. सबने यही सोच लिया कि अपने निर्वाचन के अनुरूप ही वह अमेरिका के अक्खड़ रवैये से हटकर कुछ नया करेंगे, लीक से हटकर अमेरिकी नीतियों को ऐसा स्वरूप देंगे, जिसमें कोई दोहराव नहीं होगा और अन्य राष्ट्रों को समानता के स्तर पर अपनी बात रखने की छूट होगी, लेकिन उनके 22 महीने के कार्यकाल के बाद ये उम्मीदें ख़त्म हो चुकी हैं. अमेरिका का ज़िद्दी स्वभाव अभी भी कायम है और नीतियों में दोहराव भी बदस्तूर जारी है. कम से कम भारत के मामले में तो यह बात सौ फ़ीसदी सही है. ओबामा से पहले जब जॉर्ज बुश अमेरिका के राष्ट्रपति थे तो भारत के साथ उसके संबंधों को नई ऊंचाइयां मिली थीं. बुश भारत की लगातार बढ़ती ताक़त को अहमियत देते थे और वैश्विक मामलों में, ख़ासकर भारतीय उपमहाद्वीप में भारत की भूमिका को प्रोत्साहित करते थे. दोनों देशों के बीच संबंधों में विश्वास की डोर लगातार मज़बूत हो रही थी, लेकिन आज स्थितियां बदल चुकी हैं. आज भारत और अमेरिका के संबंध दोबारा बिल क्लिंटन के दौर में पहुंच चुके हैं, जहां बातचीत तो ख़ूब होती है, लेकिन उसमें गंभीरता नहीं होती. भारत के दौरे पर आए ओबामा के सामने वैसे तो करने को बहुत कुछ है, लेकिन सबसे बड़ी चुनौती यही है कि दोबारा विश्वास का माहौल कैसे पैदा हो. इसके लिए उन्हें अपने उसी नारे को याद करना होगा, जो उन्होंने अमेरिकी मतदाताओं को लुभाने के लिए दिया था, चेंज वी कैन बिलीव इन.

भारत के परिप्रेक्ष्य में ओबामा के 22 महीनों के कार्यकाल की सबसे बड़ी ख़राबी यह रही है कि अमेरिकी प्रशासन को यही नहीं पता कि दोनों देशों के बीच संबंधों का स्वरूप कैसा हो. नवंबर 2009 में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की अमेरिका यात्रा के दौरान आतंकवाद के ख़िलाफ़ संयुक्त अभियान की शुरुआत के अलावा ओबामा के कार्यकाल में ऐसा कुछ नहीं हुआ, जिससे भारत उत्साहित हो. इस अभियान की असलियत भी जल्द ही उजागर हो गई, जब डेविड कोलमैन हेडली से पूछताछ की अनुमति के लिए भारत को नाकों चने चबाने पड़े. दरअसल, ओबामा प्रशासन भारत के बारे में कोई भी फ़ैसला लेने से पहले चीन और पाकिस्तान की भावनाओं के बारे में सोचने लगता है. इसका सबसे बड़ा उदाहरण 26/11 के आरोपियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई की भारत की मांग के प्रति अमेरिकी रवैया है. भारत बार–बार यह कहता रहा है कि जब तक इन आरोपियों के ख़िलाफ़ पाकिस्तान कड़ी कार्रवाई नहीं करता, तब तक दोनों देशों के बीच कोई बातचीत नहीं होगी, लेकिन अफ़ग़ानिस्तान युद्ध में पाकिस्तान की मदद पर आश्रित अमेरिका इसके लिए दबाव बनाने से बचता रहा है. वह पाकिस्तान से अलकायदा और अफगान तालिबान के ख़िलाफ़ कार्रवाई करने के लिए कहता है, लेकिन भारत की भावनाओं को ज़्यादा तवज़्ज़ो नहीं देता.

इतना ही नहीं, भारत दौरे पर आने से ठीक पहले ओबामा के एक कदम ने भारत की चिंताएं बढ़ा दी हैं. ओबामा ने एक पत्र लिखकर अमेरिकी संसद से यह अनुरोध किया है कि वह चीन को सी–130 लड़ाकू विमान बेचने की अनुमति दे. 1989 में लोकतंत्र समर्थक भीड़ के नरसंहार के बाद से ही अमेरिका ने चीन को सैन्य सामानों की आपूर्ति पर रोक लगा रखी है. यदि ओबामा का यह अनुरोध अमेरिकी संसद में मंजूर हो जाता है तो भारत के लिए निस्संदेह मुश्किलें बढ़ जाएंगी. कश्मीर में बढ़ती अशांति भी दोनों देशों के बीच विवाद का कारण बन सकती है. हालांकि अमेरिका अब तक इसे भारत और पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय मामला बताता रहा है, लेकिन ओबामा प्रशासन एशियाई मामलों में जिस तरह चीन की भूमिका को बढ़ा–चढ़ाकर देख रहा है, उससे उसके बदले रुख़ का अंदाज़ा लगाया जा सकता है. एशियाई मामलों में चीन के हस्तक्षेप के प्रति भारत की चिंताओं को बुश प्रशासन समझता था, लेकिन ओबामा अब तक इसे नज़रअंदाज़ करते रहे हैं. ऐसी हालत में भारत हाथ पर हाथ धरे बैठा नहीं रह सकता. हाल के दिनों में ऐसे संकेत भी मिल रहे हैं कि अमेरिका सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता के भारत के दावे को कश्मीर मुद्दे के साथ जोड़कर देख रहा है.

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अमेरिका अभी भी भारत से बहुत आगे है. इसकी वजह यह है कि अमेरिका दूसरे देशों को आर्थिक मदद उपलब्ध कराने में कोई कोताही नहीं करता, लेकिन नई तकनीकों के मामले में उसका रवैया काफ़ी संकुचित है. भारतीय रणनीतिकारों को अमेरिका के इस संकुचित नज़रिए से आगे निकलना होगा, तभी दोनों देशों के बीच कूटनीतिक संबंध भी समानता के स्तर पर पहुंचने की कोई उम्मीद हो सकती है. सामरिक क्षेत्र में भारत चीन के ख़तरे का मुक़ाबला करने के लिए अमेरिकी मदद की उम्मीद रखता है. एशियाई उपमहाद्वीप में अमेरिका के कूटनीतिक हितों की दृष्टि से ऐसा करना उसके लिए मुफ़ीद भी है, लेकिन ओबामा को अपने भारत प्रवास के दौरान इसकी स्पष्ट रूपरेखा तय करनी होगी. आर्थिक क्षेत्र में भारत और अमेरिका एक–दूसरे के उपभोक्ता बाजारों पर नजर गड़ाए हुए हैं, लेकिन अमेरिका चाहता है कि भारत अपनी अर्थव्यवस्था को और उदार बनाने की दिशा में पहल करे और रिटेल जैसे क्षेत्रों में विदेशी निवेश की सीमा में वृद्धि करे. भारत जल्दबाजी नहीं करना चाहता, क्योंकि वह बड़ी–बड़ी अमेरिकी कंपनियों की आर्थिक ताक़त से डरता है. वॉलमार्ट जैसी कंपनियों का रिकॉर्ड भारत के डर को बल प्रदान करता है, जिन्होंने दूसरे देशों में अपने पैर पसारने के बाद स्थानीय देशी कंपनियों को प्रतियोगिता से ही बाहर कर दिया है.

दरअसल, भारत और अमेरिका के द्विपक्षीय संबंधों को एक नए नज़रिए से देखने की ज़रूरत है और ओबामा का यह दौरा इस लिहाज़ से एक नई शुरुआत हो सकता है, लेकिन इसके लिए जरूरी है कि अमेरिका अपनी कथनी और करनी के बीच के फर्क को मिटाए और भारत की भावनाओं को समझे. पाकिस्तान और चीन के साथ उसके संबंध कैसे हों, यह निश्चित रूप से अमेरिका का निजी मामला है, लेकिन उसे भारत को यह भरोसा दिलाना होगा कि ये संबंध भारत की सुरक्षा चिंताओं की क़ीमत पर नहीं होंगे. दोनों देशों के बीच मज़बूत कूटनीतिक और आर्थिक सहयोग वैश्विक शांति के नज़रिए से भी समय की ज़रूरत है, लेकिन यह तभी संभव होगा, जब दोनों देश एक–दूसरे पर भरोसा कर सकें. भरोसा बहाल करने की ज़िम्मेदारी बराक ओबामा की ज़्यादा है, क्योंकि भारत इसके लिए पहले ही प्रयास करता रहा है.

aditya@chauthiduniya.com

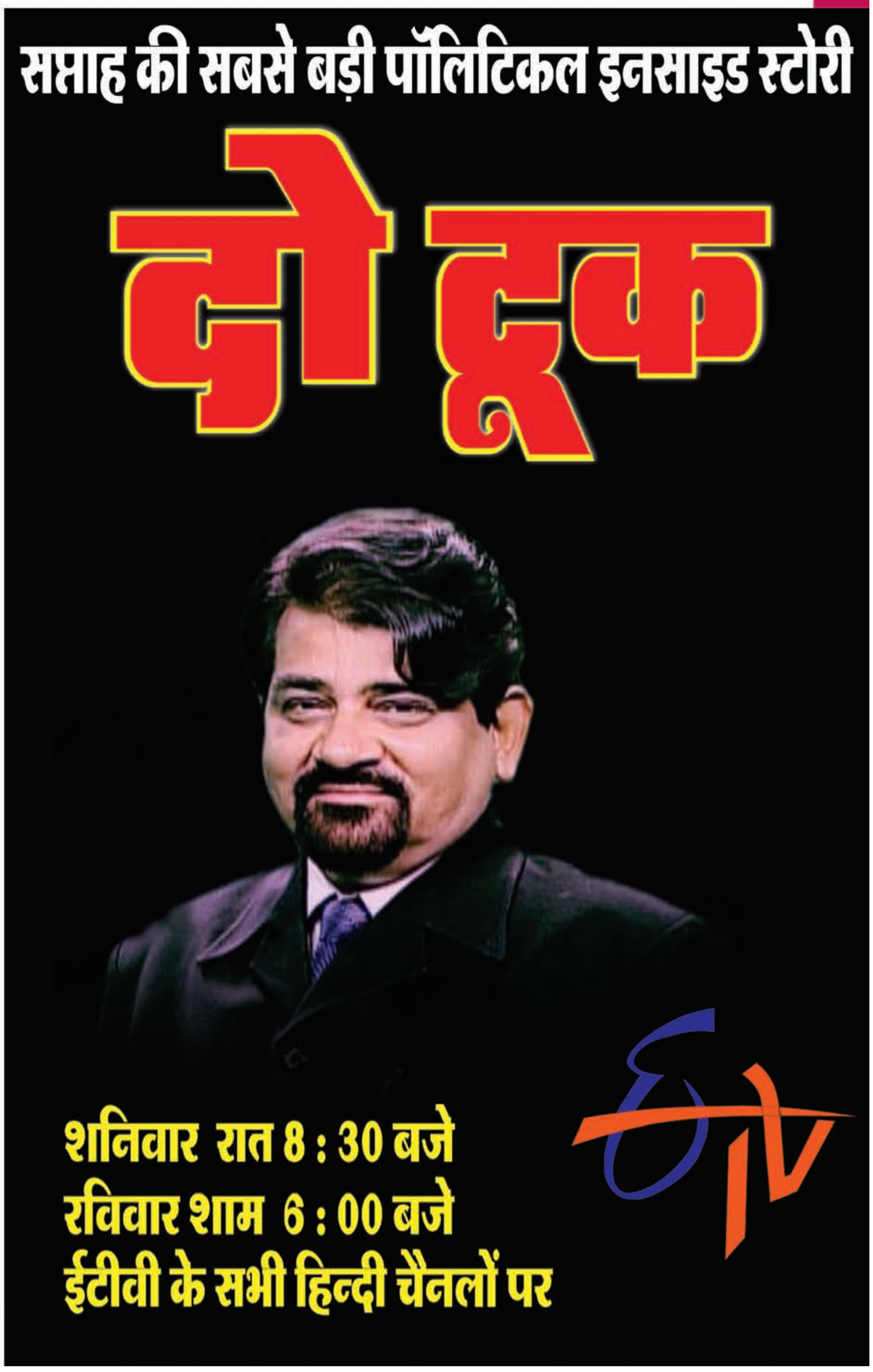

बाबा का आनंद स्वरूप और उनकी अनिर्वचनीय शक्ति देखकर मुले शास्त्री के आश्चर्य का ठिकाना न रहा. उनकी आंखें अश्रुपूरित होते हुए भी प्रसन्नता से नाच रही थीं.

दिल्ली, 01 नवंबर-07 नवंबर 2010
चौथी दुनिया

मुले शास्त्री और साईं बाबा

बाबा ने केले छीलकर भक्तों में बांट दिए और उनके छिलके अपने लिए रख लिए. हस्तरेखा विशारद होने के नाते मुले शास्त्री ने बाबा के हाथ की परीक्षा करने की प्रार्थना की, परंतु बाबा ने उनकी प्रार्थना पर कोई ध्यान न देकर उन्हें चार केले दिए. इसके बाद सब लोग बाड़े पर लौट आए.

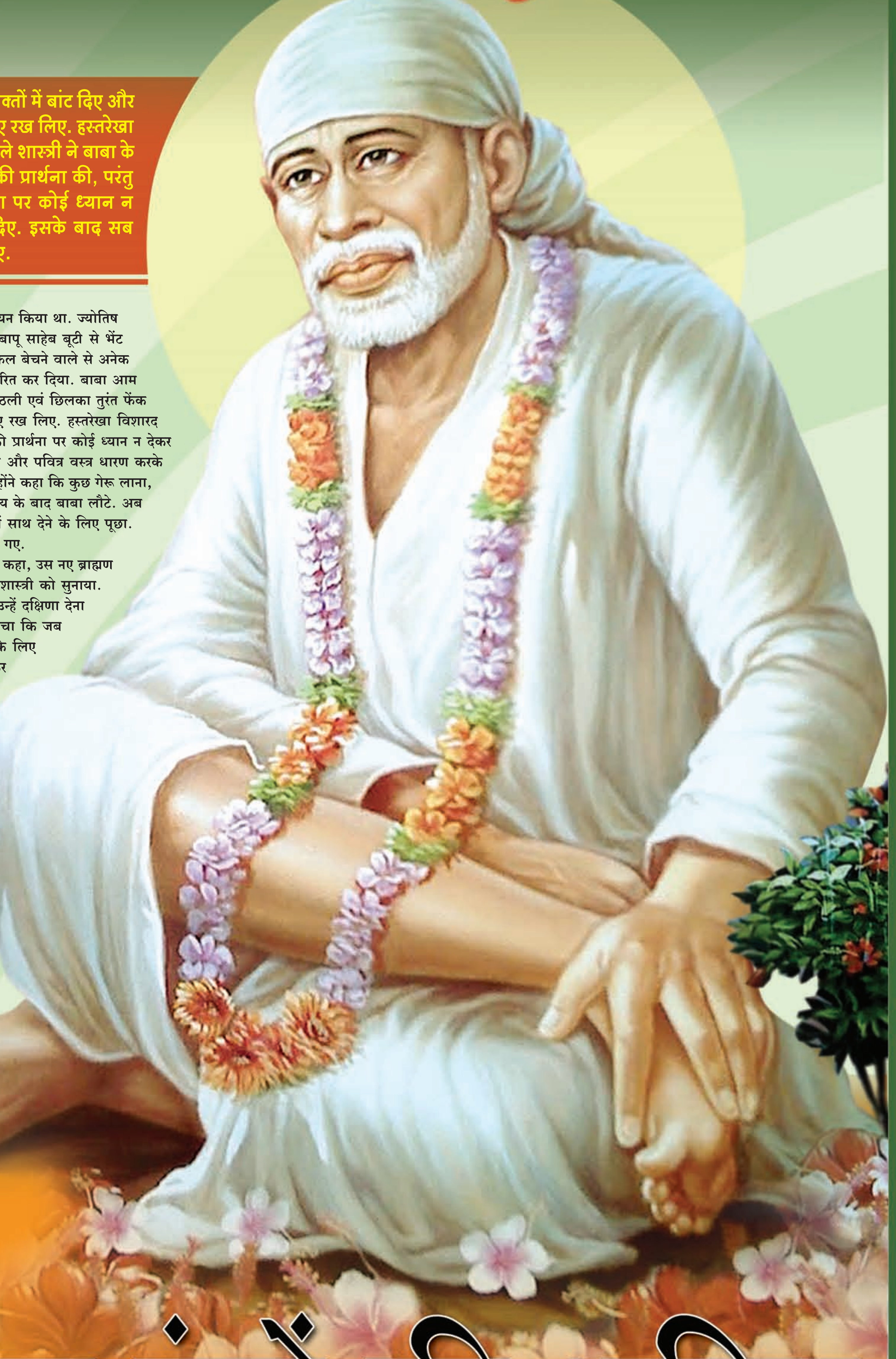

नासिक में एक ब्राह्मण थे, नाम था मुले शास्त्री. उन्होंने आधा दर्जन शास्त्रों का अध्ययन किया था. ज्योतिष एवं सामुद्रिक शास्त्र में वह पारंगत थे. एक बार वह नागपुर के प्रसिद्ध करोड़पति बापू साहेब बूटी से भेंट करने के बाद अन्य सज्जनों के साथ बाबा के दर्शन करने मस्जिद में गए. बाबा ने फल बेचने वाले से अनेक प्रकार के फल और अन्य पदार्थ ख़रीदे और मस्जिद में उपस्थित लोगों में उन्हें वितरित कर दिया. बाबा आम को इतनी चतुराई से चारों ओर से दबा देते थे कि चूसते ही संपूर्ण रस मुंह में आ जाता और गुठली एवं छिलका तुरंत फेंक दिया जा सकता था. बाबा ने केले छीलकर भक्तों में बांट दिए और उनके छिलके अपने लिए रख लिए. हस्तरेखा विशारद होने के नाते मुले शास्त्री ने बाबा के हाथ की परीक्षा करने की प्रार्थना की, परंतु बाबा ने उनकी प्रार्थना पर कोई ध्यान न देकर उन्हें चार केले दिए. इसके बाद सब लोग बाड़े पर लौट आए. अब मुले शास्त्री ने स्नान किया और पवित्र वस्त्र धारण करके अग्निहोत्र आदि में जुट गए. बाबा भी अपने नियमानुसार लेंडी को रवाना हो गए. जाते-जाते उन्होंने कहा कि कुछ गेरू लाना, आज भगवा वस्त्र रंगेंगे. बाबा के शब्दों का अभिप्राय किसी की समझ में नहीं आया. कुछ समय के बाद बाबा लौटे. अब मध्यान्ह बेला की आरती की तैयारियां प्रारंभ हो गई थीं. बापू साहेब जोग ने मुले से आरती में साथ देने के लिए पूछा. उन्होंने उत्तर दिया कि वह संध्या के समय बाबा के दर्शनों को जाएंगे. तब जोग अकेले ही चले गए.

बाबा के आसन ग्रहण करते ही भक्तों ने उनकी पूजा की. अब आरती प्रारंभ हो गई. बाबा ने कहा, उस नए ब्राह्मण से कुछ दक्षिणा लाओ. बूटी स्वयं दक्षिणा लेने के लिए गए और उन्होंने बाबा का संदेश मुले शास्त्री को सुनाया. मुले बुरी तरह घबरा गए. वह सोचने लगे कि मैं तो एक अग्निहोत्री ब्राह्मण हूं, ऐसे में मेरे द्वारा उन्हें दक्षिणा देना क्या उचित है? माना कि बाबा महान संत हैं, परंतु मैं तो उनका शिष्य नहीं हूं. फिर उन्होंने सोचा कि जब बाबा सरीखे महान संत दक्षिणा मांग रहे हैं और बूटी सरीखे करोड़पति उस दक्षिणा को लेने के लिए आए हैं तो वह इसकी अवहेलना कैसे कर सकते हैं. इसलिए वह अपने काम को अधूरा छोड़कर तुरंत बूटी के साथ मस्जिद पहुंच गए. मुले ख़ुद को शुद्ध-पवित्र और मस्जिद को अशुद्ध-अपवित्र मानकर कुछ अंतर से खड़े हो गए और उन्होंने दूर से ही हाथ जोड़कर बाबा के ऊपर पुष्प फेंके. एकाएक उन्होंने देखा कि बाबा के आसन पर उनके कैलाशवासी गुरु घोलप स्वामी विराजमान हैं. अपने गुरु को वहां देखकर उन्हें महान आश्चर्य हुआ. कहीं यह स्वप्न तो नहीं है? नहीं, नहीं, यह स्वप्न नहीं है. मैं तो पूर्ण जागृत हूं, परंतु मेरे गुरु महाराज यहां कैसे आ पहुंचे? कुछ समय तक उनके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला. उन्होंने खुद को चिकोटी भी काटी और फिर विचार किया, परंतु वह निर्णय न कर सके कि कैलाशवासी घोलप स्वामी मस्जिद में कैसे आ पहुंचे. फिर सब संदेह दूर करके वह आगे बढ़े और गुरु के चरणों में गिर हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे. दूसरे भक्त तो बाबा की आरती गा रहे थे, परंतु मुले शास्त्री अपने गुरु का नाम ले रहे थे. एक बार फिर वह जाति का अहंकार और पवित्रता-अपवित्रता की कल्पना त्याग कर गुरु के श्रीचरणों में गिर पड़े. उन्होंने आंखें मूंद लीं, परंतु खड़े होकर जब उन्होंने आंखें खोलीं तो बाबा को दक्षिणा मांगते हुए देखा. बाबा का आनंद स्वरूप और उनकी अनिर्वचनीय शक्ति देखकर मुले शास्त्री के आश्चर्य का ठिकाना न रहा. उनकी आंखें अश्रुपूरित होते हुए भी प्रसन्नता से नाच रही थीं. उन्होंने बाबा को पुनः नमस्कार किया और दक्षिणा दी. वह कहने लगे कि मेरे सब संशय दूर हो गए. आज मुझे अपने गुरु के दर्शन हुए. बाबा की यह अद्‌भुत लीला देखकर सारे भक्त दंग रह गए. गेरू लाओ, आज भगवा वस्त्र रंगेंगे, बाबा के इन शब्दों का अर्थ अब सबकी समझ में आ गया था.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

श्री सद्‌गुरु साईं बाबा के ग्यारह वचन

1. जो शिरडी आएगा, आपद दूर भगाएगा.
2. चढ़े समाधि की सीढ़ी पर, पैर तले दुख की पीढ़ी पर.
3. त्याग शरीर चला जाऊंगा, भक्त हेतु दौड़ा आऊंगा.
4. मन में रखना दृढ़ विश्वास, करे समाधि पूरी आस.
5. मुझे सदा जीवित ही जानो, अनुभव करो, सत्य पहचानो.
6. मेरी शरण आ खाली जाए, हो कोई तो मुझे बताए.
7. जैसा भाव रहा जिस मन का, वैसा रूप हुआ मेरे मन का.
8. भार तुम्हारा मुझ पर होगा, वचन न मेरा झूठा होगा.
9. आ सहायता लो भरपूर, जो मांगा वह नहीं है दूर.
10. मुझ में लीन वचन मन काया, उसका ऋण न कभी चुकाया.
11. धन्य धन्य व भक्त अनन्य, मेरी शरण तज जिसे न अन्य.

सात रंगों की शक्ति

परमात्मा ने हमें यह जीवन उपहार स्वरूप दिया है. इसी उपहार के हिस्से अग्नि, वायु, जल, मिट्टी और आकाश से यह शरीर बना है. इन्हें पंचतत्व भी कहते हैं. शरीर को चलाने वाली एक शक्ति आत्मा है, जो मन, बुद्धि और संस्कारों से जीवन की गाड़ी को खींचती है और दूसरी प्राण शक्ति है, जो सात चक्रों में केंद्रित है. इन चक्रों पर ध्यान लगाकर हम स्वयं और वायुमंडल को पवित्र और मज़बूत बना सकते हैं. मन की शक्ति की बात तो हम पहले ही कर चुके हैं, अब बात करते हैं सात चक्रों की, जो मूलाधार से शुरू होकर सहस्त्रधारा तक चलते हैं. इन्हीं में छुपी हैं इंद्रधनुषी सात रंगों की शक्तियां.

सहस्त्रधारा चक्र-असीम आनंद-बैगनी रंग
आज्ञा चक्र-ज्ञान की प्राप्ति-गहरा नीला रंग
विशुद्धि चक्र-शांति-नीला रंग
हृदय चक्र-प्रेम-हरा रंग
नाभि चक्र-सुख-पीला रंग
होरा चक्र-पवित्रता-संतरी रंग
मूलाधार-शक्ति-लाल रंग

सभी बीमारियां इन्हीं चक्रों के कमज़ोर होने से उत्पन्न होती हैं. पद्मासन में बैठकर लाल रंग पर ध्यान केंद्रित करके मूलाधार चक्र को जागृत करें. आपको शक्ति और सभी शारीरिक सुखों का अनुभव होगा. थोड़ा ऊपर उठें और संतरी रंग पर ध्यान लगाएं. यह रंग आपको पवित्रता का अनुभव देगा. शक्तियों का संचय करके ऊपर उठें तो पहुंचेंगे नाभि चक्र पर. नाभि चक्र सुख प्रदान करने वाला है. इससे पीला रंग जुड़ा है. इस पर ध्यान केंद्रित करने से चिंता, भय और दु:ख दूर होते हैं. साथ ही पाचन शक्ति बढ़ेगी और सुख की अनुभूति होगी. हृदय के बीच में है हृदय चक्र, जो प्रेम की अनुभूति देता है. हरे रंग पर ध्यान केंद्रित करने से हृदय चक्र जागृत होता है. मन और शरीर को स्वस्थ करने वाला यह चक्र ब्लड प्रेशर, दमा और हृदयरोग से बचाता है. फिर आता है विशुद्धि चक्र. हल्के नीले रंग का यह चक्र वाणी को माधुर्यता प्रदान करता है और शक्ति का अनुभव कराता है. यह थायरायड, गले और कान की बीमारियों से बचाता हुआ बातचीत करने की क्षमता बढ़ाता है. माथे पर स्थित है आज्ञा चक्र. गहरे नीले रंग पर ध्यान केंद्रित करके आप अपनी संकल्प शक्ति को अकल्पित सीमा तक बढ़ा सकते हैं.

यह चक्र आपकी अंत:शक्ति को बढ़ाता है. आपके और परमात्मा के बीच के द्वार खोलता हुआ सिर के ऊपर स्थित सहस्त्रधारा चक्र बैगनी रंग पर ध्यान केंद्रित करने से जागृत होगा. आध्यात्मिक शक्तियों का अपार भंडार देता यह सहस्त्रधारा चक्र असीम सुखों का अनुभव देता है. इस चक्र पर केंद्रित होते ही आप जीवन के सत्य को समझ जाते हैं. आप भी रंगों और चक्रों के रिश्तों को जानकर जीवन के सभी सुखों की प्राप्ति की ओर बढ़ें.

कनुप्रिया
feedback@chauthiduniya.com

इस मंदिर की पहचान स्वामी रामकृष्ण परमहंस की उपासना स्थली के रूप में की जाती है, जो कुछ समय तक इसके मुख्य पुजारी रहे.

आलोचक का अकेलापन

अनंत विजय

हिंदी में साहित्यिक पत्रिकाओं का एक लंबा और समृद्ध इतिहास रहा है, माधुरी, कल्पना एवं रूपाभ से लेकर हंस, पहल एवं तद्भव तक. साठ के दशक में लघु पत्रिका आंदोलन की शुरुआत हुई, जिसने कई दशकों तक साहित्यिक परिदृश्य में सार्थक हस्तक्षेप किया. 86 के दशक में जब राजेंद्र यादव ने हंस पत्रिका का संपादन शुरू किया तो वह एक बेहद अहम साहित्यिक घटना साबित हुई. कालांतर में हरि नारायण के संपादन में कथादेश और प्रेम भारद्वाज के संपादन में पाखी का प्रकाशन शुरू हुआ. पाखी ने बहुत कम समय में साहित्यिक जगत में अपनी पहचान कायम कर ली. अभी मेरे सामने पाखी और कथादेश दोनों के विशेषांक हैं. पाखी ने वरिष्ठ आलोचक नामवर सिंह पर अपना अंक केंद्रित किया है. वहीं कथादेश ने कल्प गल्प का कल्प को केंद्र में रखकर भारी-भरकम अंक निकाला है. पहले बात पाखी की. नामवर सिंह हिंदी साहित्य के ऐसे लेखक हैं, जो अपने जीवनकाल में ही लीजेंड बन चुके हैं. उनका व्यक्तित्व इतना बहुआयामी है कि उन्हें जानने में पाठकों की हमेशा से दिलचस्पी रही है. पाखी के संपादक प्रेम भारद्वाज ने श्रमपूर्वक नामवर जी पर सामग्री एकत्रित कर एक मुकम्मल विशेषांक निकाला है. भारद्वाज ने अपने संपादकीय में नामवर जी के अकेलेपन को बेहद मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है. एक जगह वह लिखते हैं, सचमुच नामवर जी में होरी की कर्मठता है...लेकिन किसान थकता भी है. ख़ासकर बीमार पड़ने पर भावुकता घेर लेती है. यही वह क्षण होता है, जब शिखरत्व पिघलने लगता है. अकेलेपन का अवलंबन ढूंढ़ा जाता है तुलसी बाबा में. बचपन में मां-बाप का प्यार छूटा, पत्नी छोड़ी, घर-दुआर छोड़ बनारस में दुरदुराए गए तो उसके बाद अस्सी पर बसे. यहां से वहां, वहां से यहां, रात-दिन दौड़ते-दौड़ते थक गया हूं... अब विश्राम चाहता हूं. बाबा (तुलसी) को तो विश्राम राम में मिला, मैं कहां जाऊं? तुलसी की पीड़ा बयां करते-करते वह अपना दर्द बयां करने लगते हैं. प्रेम भारद्वाज के संपादकीय से नामवर जी की जो एक छवि उभरती है, वह यह कि हिंदी का शिखर पुरुष उम्र के इस पड़ाव पर बेहद अकेला है. इसी अकेलेपन को दूर भगाने के लिए नामवर जी लगातार यात्राओं पर रहते हैं. संपादकीय के अलावा कई साहित्यिक लोगों के संस्मरण भी हैं. राजेंद्र यादव और नामवर जी में साहित्यिक अदावत जगज़ाहिर है. दोनों एक-दूसरे की टांग खिंचाई का कोई मौक़ा न तो सार्वजनिक मंचों पर गंवाते हैं और न किसी निजी पार्टियों में. दोनों जब एक साथ बैठे हों तो गोष्ठी में श्रोताओं के लिए आनंदवर्षा होती है. अगर दोनों एक साथ रसरंजन कर रहे हों तो फिर तो आनंद का समुद्र ही उमड़ पड़ता है. मैं दो-तीन रसरंजन की गोष्ठियों का गवाह रहा हूं. बातें इतनी दिलचस्प कि आप उठ ही नहीं सकते. नामवर पर लिखते हुए राजेंद्र यादव ने अपना खिलंदड़ापन नहीं छोड़ा और नामवर जी के गुणों के साथ उनके कुछ दुर्गुणों को भी उजागर कर दिया. यादव जी के अलावा भारत भारद्वाज, सुशील सिद्धार्थ के संस्मरण अच्छे हैं, लेकिन प्रभाष जी के सुपुत्र संदीप जोशी का संस्मरणनुमा लेख उनकी ख़ुद की प्रतिष्ठा के अनुरूप नहीं है. इस अंक में नामवर जी की किताबों के बहाने भी कई लेख हैं, लेकिन सबसे सारगर्भित लेख हिंदी के एक और आलोचक पुरुषोत्तम अग्रवाल का है. अगर हम कुछ भर्ती की रचनाओं को दरकिनार कर दें तो नामवर सिंह पर निकला पाखी का यह अंक अहम बन पड़ा है, जिसके लिए इसके संपादक को साधुवाद दिया जाना चाहिए.

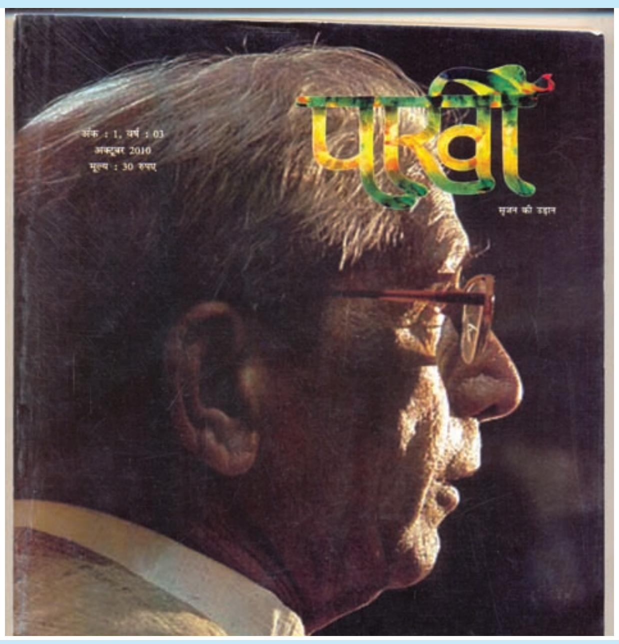

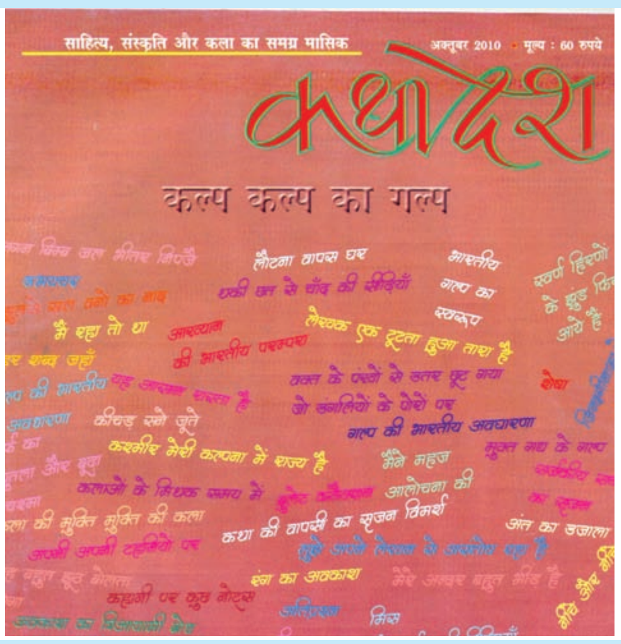

बात आलोचक और आलोचना की हो रही है तो एक साहित्यिक पत्रिका की चर्चा आवश्यक प्रतीत होती है. यह पत्रिका है पिछले तैंतालिस साल से निर्बाध रूप से निकल रही समीक्षा. इस पत्रिका का प्रकाशन जुलाई 1967 में पटना से शुरू हुआ, प्रधान संपादक थे आचार्य देवेंद्र नाथ शर्मा और संपादक थे गोपाल राय. गोपाल राय जब तक पटना में रहे, हिंदी में समीक्षा की यह पहली पत्रिका वहीं से निकलती रही. बाद में वह दिल्ली आ गए तो इस पत्रिका को भी साथ लेते आए. जिस लगन और मेहनत से पहले गोपाल जी और बाद में उनके सुपुत्र सत्यकाम ने पत्रिका का प्रकाशन किया, वह क़ाबिले तारीफ़ है. इस पत्रिका का हिंदी साहित्य के लिए सबसे बड़ा योगदान यह है कि इसने डॉ. नामवर सिंह के बाद हिंदी आलोचना संसार में उभरे बहुत सारे आलोचकों, जैसे मधुरेश, नंद किशोर नवल, हर दयाल एवं मूलचंद गौतम आदि को पहचान दिलाई. अब इस पत्रिका में एक और बदलाव हुआ है. अब समीक्षा का प्रबंधन सामयिक प्रकाशन के पास आ गया है और उसके मालिक महेश भारद्वाज इसके प्रबंध संपादक बन गए हैं. पत्रिका का रंग-रूप बदल गया है. आकर्षक गेटअप और बढ़िया छपाई की बदौलत पत्रिका में नई जान फूंक दी गई है. गोपाल राय ने हिंदी कहानी के एक संभावनाशील आलोचक सुरेंद्र चौधरी को शिद्दत से याद किया है. गोपाल जी के पास हिंदी साहित्य का विपुल अनुभव है और पत्रिका के प्रबंध संपादक अगर उस अनुभव का लाभ उठा सके तो पत्रिका में और जान आ जाएगी. साथ ही संस्थागत पूंजी के सहारे यह पत्रिका निर्बाध रूप से अपने प्रकाशन के पचास साल पूरे कर सकती है. अगर यह होता है तो हिंदी प्रकाशन के लिए यह बड़ी घटना होगी.

कथादेश के विषेशांक का संपादन कवि आशुतोष भारद्वाज ने किया है. आशुतोष ने भी बेहद श्रमपूर्वक पत्रिका को संयोजित किया है, लेकिन कथादेश के साथ जो एक दिक्कत है, वह है पत्रिका की छवि, जो उसकी ताक़त भी है, लेकिन साथ ही सबसे बड़ी कमज़ोरी और सीमा भी है. आशुतोष ने मेहनत से अंक निकाला तो है, लेकिन कई भर्ती की चीजों को छापने का मोह छोड़ पाते तो पत्रिका का अंक और अहम हो जाता. साठ रुपये मूल्य़ की इस पत्रिका में मनोहर जोशी, अशोक वाजपेयी से लेकर कई बड़े साहित्यिक नाम हैं. इस वजह से इसे हम अंग्रेजी के शब्द उधार लेते हुए कलेक्टर्स एडिशन कह सकते हैं. साथ ही यहां यह भी स्पष्ट रूप से साफ़ करने की ज़रूरत है कि कथादेश के अंक में कोई स्पार्क नहीं दिखाई देता. अशोक वाजपेयी को यह संग्रह बहुत पसंद आया है और उन्होंने जमकर इसके अतिथि संपादक की प्रशंसा की है, लेकिन देखना यह होगा कि हिंदी के पाठक अशोक वाजपेयी से कितना इत्तेफ़ाक़ रखते हैं.

(लेखक आईबीएन-7 से जुड़े हैं)

anant.ibn@gmail.com

पुस्तक अंश मुन्नी मोबाइल

गतांक से आगे

प्रदीप सौरभ

आनंद भारती के मोबाइल की घंटी बजी, अबे गुरु कहां हो? जोशी की आवाज़ थी. आत्मीयता उसमें भरी हुई थी. भारतीय अपना प्रेम प्रदर्शन करने के लिए ऐसी ही भाषा का प्रयोग करते हैं. ज़्यादा प्यार उमड़ता है तो दो-तीन थप्पड़ भी चल जाते हैं. गुरु, मैं घड़ी की इमारत के ठीक नीचे हूं, आनंद भारती ने उत्तर दिया. दिख गया, जोशी ने यह कहते हुए फोन काट दिया और हाथ हिलाते हुए आनंद की ओर बढ़ा. दोनों ने एक-दूसरे को बाहों में भर लिया. कहो गुरु, कैसे जुगाड़ किया लंदन आने का, क्या रैकेट है? जोशी मस्ती लेने के मूड में बोला. जैसे अब तक और रैकिटिए लंदन आते रहे हैं, वैसे मैं भी आया हूं, आनंद भारती ने भी जोशी के अंदाज़ में ही जवाब दिया. दोनों बहुत ख़ुश थे. जोशी ने कहा, गुरु, आज पूरी रात मौजमस्ती करेंगे. आनंद भारती ने भी उसकी हां में हां मिला दी, लेकिन उनके अंदर सुबह आठ बजे उठने को लेकर भी बेचैनी थी. वैसे भी लंबी यात्रा के कारण वह थके हुए थे. समय कम था. लंदन को वह पूरी तरह से घूम लेना चाहते थे. दोनों हाथों में हाथ डाले डाउनिंग स्ट्रीट के सामने से गुजरे. जोशी ने इशारे से एक गली दिखाते हुए कहा, ब्रिटेन के प्रधानमंत्री का घर है यहां. बाहर कोई खास सुरक्षा व्यवस्था नहीं थी. इस बारे में पूछने पर उसने बताया, सीसीटीवी लगे हैं. सुरक्षा है, पर दिखती नहीं है. टहलते हुए वे ट्रैफालगर स्क्वायर पहुंच चुके थे. भारी जमावड़ा था यहां. भारतीय समाज के लोगों ने दीवाली का आयोजन किया था. गुजराती से लेकर राजस्थानी गीत गाए जा रहे थे. आसपास खड़े अंग्रेज नौजवान भी गीतों की धुन पर नाच रहे थे. एकबारगी तो आनंद भारती को लगा कि वह भारत में ही हैं. आसपास उनके जैसे ही सब लोग थे. भारतीय लोग इस स्क्वायर पर अपने बड़े तीज त्योहारों पर इकट्ठा होते हैं, पूरी गर्मजोशी के साथ उत्सव का आनंद लेते हैं. उत्सवधर्मिता भारतीयों का धर्म है. इसी के चलते वे देश में रहें या देश के बाहर, ऐसे अवसरों के लिए समय निकाल ही लेते हैं. इसी बीच जोशी ने एक स्टैचू दिखाया. यह आदमकद स्टैचू ब्रिटिश जनरल हेनरी हैवलॉक का था. नीचे एक पत्थर पर उसकी शान में कसीदे उकेरे गए थे. 1857 के स्वंतत्रता आंदोलन को कुचलने वाले खलनायकों में से एक था जनरल हैवलॉक. इलाहाबाद से कानपुर और फिर लखनऊ क़ब्ज़े के दौरान उसने सैकड़ों स्वतंत्रता सेनानियों को पेड़ से लटका कर फांसी दे दी थी. पूरे अवध में उसने कत्लेआम किया था. विद्रोहियों को परास्त कर उसने कानपुर पर क़ब्ज़ा कर लिया था. इसके बाद लखनऊ में दो बार नाकाम हमला किया. उसे लखनऊ में विद्रोहियों से करारा जवाब मिला. तीसरी बार उसने लखनऊ पर क़ब्ज़ा किया, लेकिन एक अन्य विद्रोही टुकड़ी ने उसे रेज़ीडेंसी में फिर घेर लिया. उसी दौरान उसे डाइसेंट्री हो गई और 29 नवंबर, 1857 को वह मर गया.

आनंद भारती को जनरल हैवलॉक के स्टेचू के नीचे लिखे कसीदे जमे नहीं. उनके सामने अंग्रेजों के 1857 के जुर्म की दास्तान घूम रही थी. हज़ारों लोगों की जानें गई थीं. आनंद भारती शिलालेख पर लिखी इबारत को बदल तो सकते नहीं थे. जनरल हैवलॉक को शिलालेख में महानायक बताते हुए लिखा गया था कि 1857 में इंडिया में जनरल हैवलॉक और उनके साथी सिपाहियों के परिश्रम, उनकी तकलीफों, उनकी पीड़ा और उनके शौर्य को इस कृतज्ञ देश द्वारा कभी भी विस्मृत नहीं किया जा सकता. शिलालेख को पढ़ते हुए आनंद भारती के अंदर गुस्सा भर आया था. वह प्रतिकार करना चाहते थे, लेकिन प्रतिकार कैसे किया जाए, यह उन्हें समझ में नहीं आया. उन्होंने सोचा कि शिलालेख पर थूक कर वह प्रतिकार कर सकते हैं. उनके मुंह में पान मसाला भरा था. चारों तरफ़ भीड़ थी. पीक उगलने के लिए वह मौक़ा तलाशने लगे. एक समय आ ही गया, जब उन्होंने मुंह में भरी पीक को स्टेचू के नीचे शिलालेख पर थूक दिया.

अगले अंक में जारी...

समाजसेवा ने रासमणि को रानी बना दिया

यह यथार्थ है कि जिस अनुपात में भारत में धनकुबेरों की संख्या बढ़ी है, उस मुक़ाबले वे अपनी सामाजिक ज़िम्मेदारियों के निर्वहन में पीछे होते चले गए. पहले आज के जैसे धनाढ्य तो नहीं थे, किंतु उनके चिंतन में समाज का दु:ख-दर्द भी होता था, इसीलिए वे अपनी क्षमता अनुसार अपनी आय का एक अंश सामाजिक कार्यों में लगा देते थे. उनके द्वारा निर्मित कराए गए मंदिर, सराय, धर्मशालाएं, यतीमखाने, पुस्तकालय, स्कूल-कॉलेज एवं अस्पताल विभिन्न शहरों में देखे जा सकते हैं. लेकिन इधर पिछले कुछ वर्षों में धनपतियों की सोच बदली है. आज भारत के धनकुबेरों के पास उस समाज की चिंता के लिए समय नहीं है, जिसमें वे पले-बढ़े. वे समाजसेवा की गतिविधियों में तभी अपना सहयोग देते हैं, जब उनमें उनका कोई हित सध रहा हो. ऐसे में कोलकाता की रानी रासमणि का नाम याद आना स्वाभाविक है, जो अपने सामाजिक योगदान के कारण रानी न होकर भी रानी कहलाईं और इतिहास के पन्नों में एक उदाहरण छोड़ गईं. डेढ़ दशक पूर्व कोलकाता की इस धनाढ्य महिला ने यहां कई घाट, बाज़ार एवं यात्रा मार्ग बनवाए, इंपीरियल लाइब्रेरी एवं प्रेसिडेंसी कालेज के लिए सहयोग किया. उन्होंने शरणालयों की स्थापना की, नहरें बनवाईं, ज़मीनें दीं और कई अन्य कल्याणकारी कामों के लिए मुक्तहस्त दान किया. वह अन्याय के ख़िलाफ़ अंग्रेजों से भी भिड़ीं. कोलकाता दक्षिणेश्वर में स्थित विशाल मंदिर उनके ही योगदान से बना. जनहित के कामों में उनकी सक्रिय भागीदारी के चलते बंगाल में लोग उन्हें रानी रासमणि कहने लगे. हालांकि कुछ लोग रानी नाम उनकी माता द्वारा दिया मानते हैं. रासमणि बंगाल के 24 परगना ज़िले के एक कृषक परिवार से थीं. सात साल की उम्र में माता का साया उनके सिर से उठ गया. 1804 में जब वह 11 साल की थीं तो पिता ने उनका विवाह कोलकाता के जनबाड़ी के संपन्न ज़मींदार परिवार में रामचंद्र दास से कर दिया. उस समय भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन था और राजधानी कोलकाता थी. परिवार में रासमणि के आते ही कारोबार में लाभ होने लगा. रामचंद्र दास जब जीवित थे तो उन्होंने कोलकाता में कई जनहितकारी काम किए. 1936 में रासमणि जब 43 साल की थीं तो पति का देहांत हो गया. वैधव्य की त्रासदी के बावजूद रासमणि ने अपने पति के कारोबार को अपने दामाद माथुर बाबू के सहयोग से न केवल संभाला, बल्कि उसे दिशा भी दी. व्यापार में अच्छा लाभ होने लगा. मान-सम्मान एवं धन-संपदा हमेशा के लिए नहीं होती, यह सोचकर वह अपने पति की तरह आय का एक हिस्सा समाज के कामों में लगा देती थीं. उन्नीसवीं शताब्दी तक कोलकाता में प्रतिष्ठित मंदिर नहीं थे और ज़्यादातर लोग पूजा-अर्चना हेतु बनारस जाते थे. सड़क मार्ग से सफ़र बेहद लंबा और कष्टप्रद था, जबकि जलमार्ग से समर्थवान ही जा पाते. 1847 में रासमणि को बाबा विश्वनाथ एवं देवी अन्नपूर्णा के दर्शन हेतु बनारस जाने की इच्छा हुई. कहा जाता है जिस दिन उनके बेड़े को जलमार्ग से बनारस प्रस्थान करना था, पूर्व रात्रि में देवी ने उनसे सपने में कहा कि यदि वह वहां नदी तट पर उनका मंदिर बनाकर उनकी मूर्ति विधानपूर्वक प्रतिस्थापित कर दें तो वह मूर्ति में स्वयं विराजित होकर भक्तगणों को पूजा का वही लाभ प्रदान करेंगी, जो उनके साक्षात् दर्शन में होता है. भक्तों को बनारस जाने की आवश्यकता नहीं होगी. अगले ही दिन रासमणि ने अपनी यात्रा टाल दी. बंगाल उन दिनों अकाल से जूझ रहा था. यात्रा रद्द करने के साथ उन्होंने नावों पर लदा सामान पीड़ित लोगों में बंटवा दिया और स्वप्न के अनुरूप देवी काली के विशाल मंदिर को मूर्त रूप देने के प्रयास आरंभ कर दिए. पहली आवश्यकता स्थान की थी. आरंभ में रानी जहां पर मंदिर बनवाना चाहती थीं, वहां बात नहीं बनी. अंत में काफ़ी दूर हुगली नदी के पूर्वी तट पर दक्षिणसोर गांव के समीप अंग्रेज जॉन की ज़मीन पर उनकी नज़र केंद्रित हो गई, जहां उनका बगीचा था और वह लंदन जाना चाहते थे. सहमति होते ही उनसे लगभग 55 बीघा ज़मीन क्रय की गई. उसी साल मंदिर का निर्माण कार्य भी आरंभ करा दिया गया, जो आठ वर्षों तक चला.

उस समय 9 लाख रुपये ख़र्च हुए. 31 मई, 1855 को मंदिर में जगदेश्वरी की मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा कर दी गई. रासमणि 1861 में अपनी मृत्यु से पहले मंदिर के संचालन का पूरा प्रबंध कर गई थीं. कोलकाता का प्रतिष्ठित चौधरी परिवार इस इस्टेट की देखरेख करता है. दक्षिणसोर या दक्षिणेश्वर मंदिर और कोलकाता एक-दूसरे के पूरक हैं. दक्षिणेश्वर नाम से यह प्रतीत होता है कि यह एक शिव मंदिर होगा, किंतु मुख्य रूप से यह काली का मंदिर है. कुछ लोग मानते हैं कि कभी यहां शिव मंदिर था. यह 20 एकड़ भूमि पर स्थित है. पहले एक बाज़ार है. प्रवेश द्वार से अंदर जाते ही एक बड़ा सा आंगन है, जबकि हुगली तट की ओर 12 शिवालयों की श्रंखला है. मुख्य मंदिर में तीन तल एवं नौ शिखर हैं जिनमें सर्वोच्च शिखर की ऊंचाई 100 फीट है. मुख्य मंदिर प्रथम तल पर है, जिसके गर्भगृह में जगदेश्वरी का चतुर्मुखी विग्रह है. मौजूद प्रतिमा में देवी का वह रौद्र रूप है, जिसका प्रसंग विभिन्न धर्मग्रंन्थों में मिलता है. मंदिर के प्रथम तल की धनुषाकार छत के चार कोनों पर 4 शिखर हैं, जबकि दूसरे तल पर 5 शिखर हैं. मुख्य मंदिर से ही राधाकांत एवं नट मंदिर सटे हैं. यहीं पर पश्चिमी सीमा यानी हुगली नदी की ओर एक जैसे 12 ज्योतिर्लिंग हैं, जिनमें शिव जी की 12 नामों से पूजा होती है. इन मंदिरों के मध्य एक द्वार है, जो हुगली नदी पर चांदनी घाट पर खुलता है. यहीं पर श्रद्धालु पूजा और स्नानादि करते हैं. इन सभी शिवालयों की बंगाल शैली की धनुषाकार छत है, जिनके ऊपर गुंबद हैं.

इस मंदिर की पहचान स्वामी रामकृष्ण परमहंस की उपासना स्थली के रूप में की जाती है, जो कुछ समय तक इसके मुख्य पुजारी रहे. रामकृष्ण परमहंस का मूल नाम गदाधर था. यहां प्रतिदिन 5 से 10 हज़ार यात्री आते हैं. दक्षिणेश्वर के लिए कोलकाता के हर हिस्से से नियमित वाहन चलते हैं. आप लोकल रेलवे से भी आ सकते हैं. यहां के लिए साल्ट लेक से मेट्रो रेल का भी विस्तार हो रहा है. यहां आने वाले अधिकांश लोग बेलुड़ मठ जाना नहीं भूलते, जो नदी के दूसरे छोर पर एक किलोमीटर दूर स्थित है.

एल. मोहन कोठियाल
feedback@chauthiduniya.com

ज़ायद ख़ान का कहना है कि वह बहुत गर्व महसूस कर रहे हैं कि उन्हें इस योग्य समझा गया कि वह रॉक्सटन जैसे बड़े ब्रांड का हिस्सा बने.

हिमानी का नया एलबम

इस अवसर पर एलबम के संगीत निर्देशक रमेश मिश्रा, राजू आनंद, प्रीतम रावत, टी-सीरीज़ के कृष्ण कक्कड़ एवं हरीश कुमार भी मौजूद थे. हिमानी कपूर ने कहा कि माता रानी को यह एलबम समर्पित करते हुए मैं काफ़ी गौरवान्वित महसूस कर रही हूं.

सारेगामा फेम जानी-मानी गायिका हिमानी कपूर ने पिछले दिनों दिल्ली में आयोजित एक समारोह में माता रानी को समर्पित अपने पहले धार्मिक एलबम-सिंह की सवारी का विमोचन किया. टी-सीरीज़ द्वारा जारी इस एलबम में हिमानी ने अपनी मधुर आवाज़ में माता की कई भेंट बहुत ख़ूबसूरत अंदाज़ में पेश की हैं. इस अवसर पर एलबम के संगीत निर्देशक रमेश मिश्रा, राजू आनंद, प्रीतम रावत, टी-सीरीज के कृष्ण कक्कड़ एवं हरीश कुमार भी मौजूद थे. हिमानी कपूर ने कहा कि माता रानी को यह एलबम समर्पित करते हुए मैं काफी गौरवान्वित महसूस कर रही हूं. इस एलबम में कुल आठ भजन हैं, जिनमें छह माता रानी, एक भगवान कृष्ण एवं एक शंकर जी को समर्पित है. मुझे उम्मीद है कि धार्मिक एलबम की दिशा में मेरे इस पहले प्रयास को लोग पसंद करेंगे.

इस मौक़े पर हिमानी ने एलबम के कुछ भजन गाकर उपस्थित लोगों को मंत्रमुग्ध कर दिया. उन्होंने सिंह की सवारी करके मैया आ..., जय माता दी, जय मां रानी..., नाचे कृष्ण मुरारी एवं तन दीपक मन जोत... को अपनी मखमली आवाज़ देकर माहौल को भक्तिमय बना दिया. एलबम को संगीत दिया है रमेश मिश्रा, राजू आनंद एवं प्रीतम रावत ने और गीत रचे हैं कृष्ण भारद्वाज, भूपेंद्र तोमर एवं जीत सिंह ने. सिंह की सवारी नाम से जारी इस एलबम के सभी भजन अच्छे एवं भक्ति भाव से ओतप्रोत हैं. एलबम की क़ीमत 45 रुपये रखी गई है.

ज़ायद रॉक्सटन के नए ब्रांड एंबेसडर

रॉक्सटन ने भारतीय वस्त्र निर्माता कंपनियों के बीच अपनी एक ख़ास जगह बना रखी है. अब तक रॉक्सटन के प्रमुख ग्राहक पैंटालूंस, प्रोवोग, ली-कूपर और बिग बाजार जैसे बड़े ब्रांड वाली कंपनियां रही हैं, पर कंपनी अब अपना ब्रांड बाज़ार में लाई है और उसके प्रचार के लिए उसने ज़ायद खान को चुना है. वजह, ज़ायद उसे स्टाइलिश यूथ आइकॉन के रूप में ज़्यादा परफेक्ट लगे. रॉक्सटन के कई स्टोर शीघ्र ही एक साथ खुलने वाले हैं. इस ब्रांड को रॉक्सटन फैशनिंग द फ्यूचर के नाम से जाना जाएगा. कंपनी को उम्मीद है कि इससे युवा दिलों को नयापन महसूस होगा. इन वस्त्रों को इटली के स्टाइल के अनुसार डिजाइन किया गया है. फैशन की दुनिया में इटली का स्टाइल हमेशा सराहा गया है. ज़ायद स्टाइलिश हैं, ट्रेंडी हैं, फैशनेबल हैं.

ज़ायद खान का कहना है कि वह बहुत गर्व महसूस कर रहे हैं कि उन्हें इस योग्य समझा गया कि वह रॉक्सटन जैसे बड़े ब्रांड का हिस्सा बने. इस ब्रांड की ख़ास बात यह है कि इसके दाम इतने कम रखे गए हैं कि मध्यमवर्गीय लोग भी इसे ख़रीद सकते हैं. इसकी क्वालिटी उत्तम दर्जे की है. जब आपको किसी विशेष ब्रांड की ज़िम्मेदारी दी जाती है तो यह जानना ज़रूरी है कि आप किस तरह के कपड़े पहनते हैं. बक़ौल ज़ायद, मैं बहुत फंकी कपड़े पहनता हूं. मुझे इस तरह के कपड़े पहनना बहुत पसंद है. मुझे विश्वास है कि रॉक्सटन का स्टाइल लोगों में उत्साह जगाएगा और फैशन की दुनिया में एक नई उड़ान भरेगा.

पसंदीदा गेम्स फ्री डाउनलोड करें

गेम से संबंधित कुछ क्लू भी गेमर्स को मालूम हो सकेंगे कि कैसे इसे खेला जाए. साइट पर आपको यह भी जानकारी मिलेगी कि कैसे आप इसे डाउनलोड करें.

रोल प्लेइंग गेम्स के प्रति प्लेयर्स के क्रेज को देखते हुए रोल प्लेइंग गेम्स की वेबसाइट पर इसे फ्री कर दिया गया है. इसका दूसरा फ़ायदा यह है कि इससे समय की भी बचत होगी. पहले की तरह अब प्लेयर्स को अपना पसंदीदा गेम्स खोजने के लिए समय बर्बाद करने ज़रूरत नहीं है, क्योंकि अब कई विजुअल वेबसाइटों पर रोल प्लेइंग गेम्स के लेटेस्ट और मशहूर डिजाइन मौजूद हैं, जिन्हें आप बेहद आसानी से खोज सकते हैं.

प्रत्येक गेम के फीचर अल्फाबेटिकल रूप में साइट पर दिए गए हैं, जिन्हें समझना प्लेयर्स के लिए आसान होगा. साथ ही प्रत्येक गेम का पिक्चर भी उपलब्ध है, जिससे पता चल सकेगा कि खेलने के दौरान वह कैसा दिखेगा. इसके अलावा गेम से संबंधित कुछ क्लू भी गेमर्स को मालूम हो सकेंगे कि कैसे इसे खेला जाए. साइट पर आपको यह भी जानकारी मिलेगी कि कैसे आप इसे डाउनलोड करें. इसके अलावा आप गेम के दौरान खुद ही एनालाइज कर सकेंगे कि कैसे आप विजयी हों. अगर आप भी रोल प्लेइंग गेम्स के शौक़ीन हैं तो इसे आप www.roleplayinggamesfree.com साइट पर फ्री डाउनलोड कर सकते हैं.

वीडियोकॉन के नए मोबाइल

वीडियोकॉन ने भारतीय बाजार में अपना वीडियोकॉन जियस एंड्राएड फोन उतारा है. यह एक एंड्रायड ट्रेडमार्क वाला 2.1 एक्लेयर फोन है. इसके मल्टीटच (केपेसेटिव) स्क्रीन का आकार 3.2 इंच है. यह 600 एमएचजेड क्वालकोम माइक्रो प्रोसेसर, 5 एमपी कैमरा, वाई-फाई, एजीपीएस एवं पुश मेल जैसी कई खूबियों से लैस है. जियस के साथ ही कंपनी ने चार नए मोबाइल फोनों की सीरीज भी पेश की है. एंड्राएड ट्रेडमार्क की शक्ति से निर्मित जियस पर पर्सनल कंप्यूटर पर काम करने का अनुभव मिलता है. एंड्राएड ऑपरेटिंग सिस्टम उपकरण इंटरनेट के साथ अटूट संबंध प्रदान करता है और आसानी से डाउनलोड एवं इंस्टॉल किए जा सकने वाले 70,000 से अधिक अनुप्रयोगों की सुविधा भी इसके एंड्राएड पावर से मिलती है. जियस पर पहले से लोड यह एप्लीकेशंस इंटरनेट का उपयोग करने के लिए नया आयाम प्रस्तुत करता है. अन्य फोनों में वीडियोकॉन वी-1410, वी-1475 एवं वी-1606 आदि शामिल हैं.

वीडियोकॉन मोबाइल्स के सीईओ राहुल गोयल कहते हैं कि आज का मोबाइल फोन बाजार काफी गतिशील एवं मूल्य संवेदी है. लोग ऐसे मोबाइल फोन की तलाश में रहते हैं, जो न केवल उनके स्टाइल को प्रदर्शित कर सके, बल्कि वह अद्भुत भी हो. सीईओ अनिल खेरा कहते हैं कि हमारा उद्देश्य रेंज और ऑफरिंग में इस श्रेणी के फोनों में सबसे आगे निकलना है. एंड्राएड बाजार में प्रवेश करना हमारी प्रस्तुतियों को आगे बढ़ाता है और हमें भारत के अग्रणी मोबाइल फोनों में बेहतर स्थिति प्रदान करता है. मोबाइल फोन की दुनिया में हम विशेष पहचान कायम करना चाहते हैं. इस फोन की खास बात यह है कि इसमें लेजर प्वाइंट्स मौजूद हैं. यह अपने आप में एक अनोखा फोन है. वी-1410 मॉडल में वीजीए कैमरा, ब्लूटुथ, 1.8 इंच टीएफटी स्क्रीन और 4 जीबी तक की माइक्रो एसडी है. इसमें दो बैटरियां, दो टी-लैश कार्ड्स स्लॉट उपलब्ध हैं. उपयोगकर्ता दो पावर स्रोतों के बीच टॉगल कर सकता है और फोन वैकल्पिक पावर पर हो तो एक्सटर्नल बैटरी को निकाला जा सकता है. इसका ड्यूअल टी-लैश 8 जीबी एक्सटर्नल स्टोर स्पेस प्रदान करता है. वी-1475 एक स्टाइलिश क्वर्टी की पैड फोन है. यह 4 ट्रेंडी और फैशनेबल रगों में आता है. हाई रिजोल्यूशन, 2 इंच टीएफटी स्क्रीन एवं एमपी 3 प्लेयर युक्त इस फोन की मेमारी 4 जीबी तक बढ़ाई जा सकती है. इसके अलावा इसमें ब्लूटुथ, एफएम रेडियो एवं एफएम रिकॉर्डिंग की सुविधा है. वीजीए कैमरे और वीडियो रिकॉर्डिंग के साथ इसमें प्री लोडेड सोशल नेटवर्किंग भी मौजूद है.

वी-1606 एक मल्टीमीडिया उपकरण है, जिसमें 2 मेगा पिक्सल एचडी कैमरा, ड्यूअल लाउडस्पीकर और चमकदार 6 सेंटीमीटर टीएफटी स्क्रीन है. इसकी खास बात यह है कि इसमें दो बैटरियां हैं, जिनमें एक एक्सटर्नल और दूसरी इंटरनल बैटरी के साथ टॉगल की है. यह एक ड्यूअल टी-लैश फोन है, जिसके साथ एक्सटर्नल हॉट स्वेप योग्य माइक्रोएसडी कार्ड है. उपयोगकर्ता को एसडी कार्ड बदलते समय फोन बंद करने की आवश्यकता नहीं होती. इसमें 2 मेगा पिक्सल कैमरे के साथ 2.4 इंच की स्क्रीन है. इसकी ड्यूअल बैटरियां 5 घंटे का टॉकटाइम और 300 घंटे का स्टैंड बॉय टाइम प्रदान करती हैं. इसमें दो मेमोरी कार्ड स्लाट उपलब्ध कराए गए हैं, जिनमें चार जीबी के एक्सटेंडेबल मेमोरी कार्ड लगाए जा सकते हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

विज्ञापन हेतु संपर्क करें : email : advt@chauthiduniya.com

सचिन के आलोचक पहले अक्सर ऐसे आरोप लगाते रहे हैं कि नाज़ुक मौक़ों पर जब टीम को उनसे अच्छी पारी की ज़रूरत होती है, तब वह जल्दी आउट हो जाते हैं.

सचिन तेंदुलकर
सिपली द बेस्ट

अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट में बल्लेबाज़ी का शायद ही ऐसा कोई रिकॉर्ड है, जिसमें सचिन तेंदुलकर का नाम नहीं है, लेकिन उनकी महानता की असली वजह ये आंकड़े नहीं हैं. उन्हें यदि सर्वकालीन महानतम खिलाड़ी माना जाता है तो इसका असल कारण वह ख़ुशनुमा एहसास है, जो उनकी बल्लेबाज़ी से प्रशंसकों को मिलता है.

पिछले 21 सालों से क्रिकेट के मैदान पर बल्लेबाज़ी की नई–नई परिभाषाएं लिख रहे सचिन तेंदुलकर की उपलब्धियां ख़ुद ही उनकी महानता की कहानी बयां करती हैं, लेकिन क्या वह क्रिकेट के सर्वकालीन महानतम बल्लेबाज़ हैं? यदि भारत के पूर्व सलामी बल्लेबाज़ सुनील गावस्कर की बातों को मानें तो सचिन की तुलना किसी अन्य खिलाड़ी से नहीं की जा सकती. गावस्कर की राय में सचिन इस ग्रह के ही नहीं हैं. क्रिकेट के महान बल्लेबाज़ों की सूची में पहला नाम ऑस्ट्रेलिया के डॉन ब्रैडमैन का लिया जाता है, जिन्होंने 1928–48 के बीच 52 टेस्ट मैचों में 99.94 के औसत से 6996 रन बनाए थे. सचिन ने 1989 से 2010 के बीच 171 टेस्ट मैचों में 56.96 के औसत से 14,240 रन बनाए हैं. रनों की संख्या के आधार पर सचिन ब्रैडमैन से कहीं आगे हैं, लेकिन प्रति पारी रन के हिसाब से वह काफ़ी पीछे छूट जाते हैं.

बावजूद इसके इन दोनों खिलाड़ियों की कोई तुलना इसलिए नहीं की जा सकती, क्योंकि ये दो अलग–अलग युगों का प्रतिनिधित्व करते हैं. ब्रैडमैन के जमाने में क्रिकेट का स्वरूप काफ़ी अलग था. तब न तो वन डे मैचों की धमाचौकड़ी थी, न ही टी–20 का ताबड़तोड़ अंदाज़. खिलाड़ियों पर लगातार प्रदर्शन का वैसा दबाव नहीं होता था, जैसा मौजूदा दौर में होता है. क्रिकेट के मुक़ाबले साल भर चलते रहते हैं और खिलाड़ियों पर अलग तरह का दबाव होता है. लगातार अच्छा प्रदर्शन करते हुए उन्हें अपनी फिटनेस बनाए रखनी होती है, साथ ही अपने प्रशंसकों की उम्मीदों पर भी खरा उतरना होता है. सचिन ने दो दशकों से भी ज़्यादा के अपने अंतरराष्ट्रीय करियर में हर विपक्षी टीम के ख़िलाफ़ अलग–अलग परिस्थितियों में अलग–अलग तरह की पिचों पर रन बनाए हैं. टेस्ट और वन डे क्रिकेट में सबसे ज़्यादा रनों के अलावा अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट में सबसे ज़्यादा शतक बनाने का रिकॉर्ड भी उनके ही नाम दर्ज है. टेस्ट मैच हो या वन डे क्रिकेट, सचिन की बल्लेबाज़ी में एक समान स्वाभाविकता झलकती है और यही बात उन्हें अन्य किसी भी बल्लेबाज़ से अलग कतार में खड़ा करती है.

मौजूदा दौर के खिलाड़ियों पर नज़र डालें तो दो–तीन ऐसे बल्लेबाज ज़रूर हैं, जो सचिन को चुनौती देते नजर आते हैं. इनमें ऑस्ट्रेलिया के रिकी पोंटिंग और वेस्टइंडीज के ब्रायन लारा का नाम लिया जा सकता है. 2006 में अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट से संन्यास लेने से पहले लारा टेस्ट मैचों में सबसे ज़्यादा रन बनाने वाले खिलाड़ी थे और कई विशेषज्ञों का यह दावा है कि उनकी बल्लेबाज़ी में संपूर्णता थी. साथ ही यह भी एक सच्चाई है कि वेस्टइंडीज क्रिकेट के अवसान के दौर में लारा ने अकेले अपनी बल्लेबाज़ी के दम पर कई बार टीम की जीत का मार्ग प्रशस्त किया. लेकिन लारा की सबसे बड़ी कमी यह थी कि वह दबाव के क्षणों में अक्सर अपना संतुलन खो देते थे. फिर उनका करियर विवादों से भी घिरा रहा. यदि बात रिकी पोंटिंग की करें तो एक–दो साल पहले तक पोंटिंग सचिन के रिकॉर्ड के काफ़ी क़रीब पहुंच चुके थे, लेकिन इसके बाद से उनके करियर में एक ठहराव सा आ गया है. उनकी बल्लेबाज़ी में अब वह आक्रामकता और निरंतरता नहीं दिखाई देती, जो पहले थी. फिर हम यह बात भी नहीं भूल सकते कि पोंटिंग के अंतरराष्ट्रीय करियर का अधिकांश हिस्सा ऐसे दौर में गुज़रा है, जिसमें ऑस्ट्रेलियाई टीम लगातार जीतती रही है और शीर्ष पर रही है. जब टीम जीत रही हो तो खिलाड़ियों पर इतना दबाव नहीं होता है, जबकि सचिन ने ऐसे दौर में भारतीय क्रिकेट को संभाला है, जब टीम इंडिया हार–जीत के लिए संघर्ष करने को मजबूर थी. 1989 में जब सचिन ने अपने करियर की शुरुआत की थी तो भारत अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट के निचले पायदान पर था, जबकि आज आईसीसी की टेस्ट रैंकिंग में वह पहले नंबर पर है और वन डे में भी शीर्ष की तीन टीमों में शामिल है तथा इसका सबसे बड़ा कारण तेंदुलकर की बल्लेबाज़ी ही है.

सचिन के आलोचक पहले अक्सर ऐसे आरोप लगाते रहे हैं कि नाज़ुक मौक़ों पर जब टीम को उनसे अच्छी पारी की ज़रूरत होती है, तब वह जल्दी आउट हो जाते हैं. सचिन के करियर के शुरुआती सालों के लिए यह बात सही कही जा सकती है, लेकिन पिछले तीन–चार सालों में उन्होंने इस कमी को भी दूर कर लिया है. इसका सबसे ताज़ा उदाहरण ऑस्ट्रेलिया के ख़िलाफ़ खेली गई टेस्ट सीरीज का दूसरा मैच है, जिसमें उन्होंने पहले चेतेश्वर पुजारा और फिर राहुल द्रविड़ के साथ मिलकर टीम की जीत का रास्ता तैयार किया. आंकड़ों और तर्कों की बात छोड़ भी दें तो पिछले दो दशकों में सचिन ने अपने प्रशंसकों को ख़ुश होने के जितने मौक़े दिए हैं, उसका कोई सानी नहीं. मैदान पर उनका बल्ला चलता है तो पूरे भारत में जश्न का माहौल बन जाता है. लोग उन्हें क्रिकेट का भगवान मानते हैं. पिछले बीस सालों से तमाम तरह की समस्याओं से जूझ रही भारत की जनता की प्रसन्नता का एक सबसे बड़ा कारण सचिन की बल्लेबाज़ी ही है और यह एक ऐसा सच है, जिसके आगे कोई तर्क नहीं चलता, न ही किसी रिकॉर्ड की कोई अहमियत है.

आदित्य पूजन
aditya@chauthiduniya.com

देश का पहला इंटरनेट टीवी

तीन महीने में रचा इतिहास

- हिन्दी की सबसे पॉपुलर वेबसाइट
- हर महीने 15,00,000 से ज़्यादा पाठक
- हर दिन 50,000 से ज़्यादा पाठक
- स्पेशल प्रोग्राम–भारत का राजनीतिक इतिहास
- समाचार–राजनीति, खेल, पर्यावरण, मनोरंजन
- संगीत और फ़िल्मों पर विशेष कार्यक्रम
- साई की महिमा

www.chauthiduniya.tv

एफ–2, सेक्टर–11, नोएडा–201301

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

निर्माता-निर्देशक और अभिनेता वे महत्वपूर्ण कड़ियां हैं, जिन पर हिंदी सिनेमा की नींव टिकी है, लेकिन आज ये कड़ी कमज़ोर होती जा रही है.

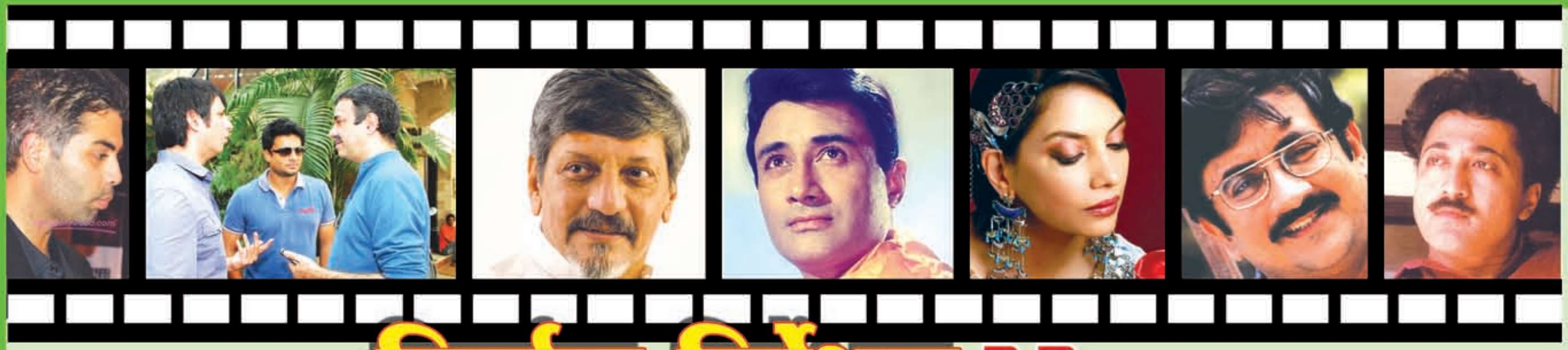

निर्माता-निर्देशक कल, आज और कल

राजेश एस कुमार

अमोल गुप्ते निर्देशन के उद्देश्य से तारे ज़मीं पर की कहानी लेकर किसी निर्माता के बजाय आमिर सरीखे अभिनेता के पास पहुंचते हैं. आमिर को कहानी पसंद आती है और वह अभिनय के साथ-साथ बतौर निर्माता फिल्म से जुड़ जाते हैं. प्रोडक्शन के बीच में ही आमिर अमोल को बाहर करके ख़ुद निर्देशक की कैप संभाल कर मुनाफ़े के साथ-साथ अवार्ड्स से अपनी झोली भर लेते हैं. यह हालत है आज निर्देशकों की. कल तक जो अभिनेता रोल मांगने के लिए उनके आगे-पीछे घूमते थे, आज वे ख़ुद को निर्माताओं-निर्देशकों का आका समझ रहे हैं. वे भूल गए हैं कि स्टारडम का जो नशा उन पर हावी है, वह उन्हीं निर्माताओं-निर्देशकों की ही देन है.

निर्माता-निर्देशक और अभिनेता वे महत्वपूर्ण कड़ियां हैं, जिन पर हिंदी सिनेमा की नींव टिकी है, लेकिन आज ये कमज़ोर होती जा रही हैं. कभी अभिनेताओं को खोजकर और उन्हें अभिनय की बारीकियां सिखाकर रुपहले पर्दे पर उतारने वाले फिल्म निर्माता आज उन्हीं के हाथों की कठपुतली बनने के लिए मज़बूर हैं. आमिर, शाहरुख़, ऐश्वर्या एवं अक्षय जैसे सितारे आज ख़ुद निर्देशक और कहानी चुनते हैं. इन्हें पर्दे पर उतारने वाले इनके गॉड फादर क्रमश: मंसूर खान, राजकंवर, राहुल रवैल एवं प्रमोद चक्रवर्ती पर्दे की चकाचौंध में कहीं खो गए हैं. ज़्यादातर निर्माता-निर्देशक अब किसी साइड बिजनेस के ज़रिए रोज़ी-रोटी कमा रहे हैं या फिर मुफ़लिसी में जी रहे हैं. सुभाष घई जैसा शोमैन अब बड़े सितारों के भरोसे मुक्ता आर्ट्स को बचाने की फ़िराक़ में है. यूटीवी एवं श्री अष्टविनायक जैसी कारपोरेट कंपनियां अभिनेताओं को मुंहमांगी रक़म और मुनाफ़े में हिस्सेदारी देकर निर्माण के क्षेत्र में टिकी हुई हैं.

लेकिन हालात एकदम से नहीं बदले. इस बदलाव को समझने के लिए अभिनेता और निर्माता-निर्देशकों के रिश्तों को शुरुआत से समझना होगा. 7 जुलाई 1896 को बॉम्बे में ल्युमियर बंधु जब अपनी पहली सिनेमेटोग्राफी एग्जिबिसन दिखा रहे थे (जो भारत की कथित तौर पर पहली फीचर फिल्म है), तब तक अभिनेता पैदा नहीं हुए थे. जब प्रिंटिंग, पेंटिंग एवं जादूगरी में माहिर दादा साहेब फाल्के ने 1913 में राजा हरिश्चंद्र रची, तब तक सिर्फ़ निर्माता-निर्देशक ही सिनेमा को स्थापित करने की ज़द्दोजहद में जुटे हुए थे. निर्माण के दौरान अभिनेताओं की आवश्यकता महसूस हुई. वेश्याएं और भांड तक फिल्म में अभिनय के लिए राजी नहीं थे. हिंदी सिनेमा के पहले निर्माता-निर्देशक फाल्के ने विज्ञापन दिया कि जो भी व्यक्ति अभिनय का इच्छुक हो, वह उनसे संपर्क करे. इस तरह अभिनेता अस्तित्व में आए. 1940 की घटना है. बॉम्बे टॉकीज ने डालडा की एड फिल्म बनाई, जो संभवत: पहली भारतीय एड फिल्म थी. उसमें काम करने वाली सुमीत नाइक नामक एक अभिनेत्री को चाल के लोगों ने यह कहकर निकलवा दिया कि यहां शरीफ़ लोग रहते हैं. तब अभिनेता अभिनेत्रियों को वेश्या और भांड का पर्याय मानते थे. हमने फाल्के और डालडा का ज़िक्र सिर्फ़ यह बताने के लिए किया कि उस समय अभिनेता-अभिनेत्रियों की क्या हैसियत थी. आज के कलाकार स्टारडम के नशे में चूर हैं, लेकिन तब वे अपने अस्तित्व के लिए तरस रहे थे. फाल्के जैसे निर्माता-निर्देशकों ने सिनेमा को सामाजिक प्रतिष्ठा दिलाने के लिए घर का सामान बेचा, अभिनेता खोजे और उन्हें अभिनय की बारीकियां सिखाईं, तब जाकर पर्दे पर दिखने वाला रंगा-पुता कलाकार स्टार कहलाया. जबकि वे ख़ुद पर्दे के पीछे साइलेंट मेकर का रोल अदा करते रहे.

1930 तक हिंदी सिनेमा एक छोटी और कमाऊ इंडस्ट्री में तब्दील हो चुका था. फिर स्टूडियो सिस्टम शुरू हुआ. बॉम्बे टॉकीज, प्रभात फिल्म कंपनी, वाडिया मूवीटोन और मद्रास टॉकीज आए. अभिनेताओं को इन स्टूडियो में मासिक वेतन मिलता था. 1940 के आसपास स्टूडियो सिस्टम टूटा और अभिनेता अपना मेहनताना ख़ुद तय करने लगे. इसी दौरान फॉर्मूला फिल्मों और उनमें काले धन का आगमन हुआ. देखते ही देखते अभिनेता साइनिंग अमाउंट मांगने लगे. 50 के दशक में सोहराब मोदी, राजकपूर, गुरुदत्त और देवानंद स्टार बनकर उभरे. बढ़ता स्टार पावर और फिल्मों का बढ़ता बाज़ार देखते हुए अभिनेता ख़ुद निर्माता-निर्देशक बनने लगे. राजकपूर शोमैन बन गए, जबकि देवानंद अपने बैनर नवकेतन के लिए आज भी फिल्में निर्देशित कर रहे हैं. इसी दौर में निर्माता-निर्देशक के हाथों बने सुपर स्टार उन्हीं के हाथों से फिसलने लगे. राजकपूर का रुतबा रूस तक पहुंच गया. सिनेमाई संस्था का ढांचा टूटने लगा. निर्माता-निर्देशकों के दफ्तरों के चक्कर काटने वाले अभिनेताओं के घरों पर निर्माता-निर्देशक कतार लगाने लगे. साइनिंग अमाउंट की जगह वे मुनाफ़े में हिस्सा मांगने लगे. कभी मुगल-ए-आज़म को के आसिफ, मदर इंडिया को महबूब खान की फिल्म बताने वाले दर्शक और मीडिया आज दबंग को सलमान और सिंह इज किंग को अक्षय की फिल्म बता रहे हैं. अभिनव, अनीज़ और हिरानी के नाम बाद में आते हैं. यह ट्रेंड बताता है कि बनाने वाले ही ख़ुद अपनी पहचान को तरस रहे हैं.

हालांकि 1970 के दशक के कुछ निर्माता-निर्देशक इस बदलाव से बचे रहे. श्याम बेनेगल और गोविंद निहलानी जैसे निर्माता-निर्देशक आज भी अपनी शर्तों पर काम करते हैं, लेकिन ये कमर्शियल सिनेमा की परिधि से बाहर रहे. 16 एमएम का सिनेमा 35 और 70 एमएम से गुज़रता हुआ जब आईमैक्स फॉर्मेट तक पहुंचा तो इस दरम्यान बहुत कुछ बदल चुका था. तकनीक , आर्थिक ढांचे और सिनेमा के प्रति समाज का नज़रिया भी बदल गया. जो ख़ुद को ढाल पाया, वही टिका. अगर मौजूदा हालात के कारणों की बात करें तो असल कारण बाज़ार का बदलाव ही रहा. अभिनेता निर्माता-निर्देशकों से पहले बाज़ार की बाजीगरी समझ गए. जब वे प्रतिभा और तकनीक तलाशने में लगे रहे, तब अभिनेता ख़ुद को बड़े ब्रांड के तौर पर स्थापित करते रहे. आज इस ब्रांड का क़द इतना बढ़ गया है कि इसे बनाने वाले भी बौने साबित हो गए. ग़लती निर्माता-निर्देशकों की भी है. अधिक मुनाफ़ा कमाने के लिए स्थापित कलाकारों पर निर्भरता, स्क्रिप्ट और तकनीक में दखलंदाज़ी के चलते ही ऐसी स्थिति पैदा हुई. कॉरपोरेट घरानों के फिल्म निर्माण के क्षेत्र में कूदने से भी इनकी साख घटी. इसके अलावा मीडिया की इमेज मेकिंग पॉलिसी भी ज़िम्मेदार है. कुल मिलाकर जिन निर्माता-निर्देशकों ने आर्थिक निवेश के ज़रिए फिल्में बनाईं, सितारे बनाए, वे फर्श पर हैं और अभिनेता अर्श पर. दरअसल सिनेमा भी एक औद्योगिक संस्था है. अभिनेता इस संस्थागत ढांचे को तोड़-मरोड़ कर ख़ुद को तराशने वालों को ही गुमनामी के अंधेरे में ढकेल रहे हैं.

rajeshy@chauthiduniya.com

अल्लाह के बंदे

राइजिंग स्टार इंटरटेनमेंट और परसेप्ट पिक्चर कंपनी के बैनर तले बनी फिल्म अल्ला के बंदे को प्रोड्यूस किया है रवि वालिया ने. फिल्म के एक्जीक्यूटिव को-प्रोड्यूसर हैं आरती वालिया, नईम शेख, सुमंत पाई और डायरेक्टर हैं फारुख़ कबीर. म्यूजिक डायरेक्टर हैं चिरंतन भट्ट, कैलाश खेर, नरेश, परेश, तरुन एवं हमजा फारुखी. गीत लिखे हैं सरीम मोमीन, कैलाश खेर एवं फारुख कबीर ने और एक्शन दिया है शाम कौशल और संदीप फ्रांसिस ने. फ्रांसिस फिल्म के संपादक भी हैं. पटकथा, संवाद और कहानी के लेखक हैं फारुख़ कबीर. मुख्य कलाकार हैं शरमन जोशी (विजय), फारुख कबीर (याकूब), नसीरूद्दीन शाह (वार्डेन), अतुल कुलकर्णी (असवानी), अंजना सुखानी

(संध्या), रुखसार (निर्मला), जाकिर हुसैन (रमेश), सक्षम कुलकर्णी (विठ्ठल), सुहासिनी (मदर) एवं विक्रम गोखले.

यह फिल्म जरायम की दुनिया की काली हक़ीक़त बयान करती है कि अब बच्चे भी किस तरह इसका हिस्सा बनने लगे हैं. कहानी 12 साल के दो बच्चों के इर्द-गिर्द घूमती है, जो एशिया के सबसे बड़े स्लम में रहते हैं और एक अंतराष्ट्रीय माफिया गिरोह के लिए ड्रग्स सप्लाई करते हैं. स्लम की ज़िंदगी पर रोशनी डालती इस फिल्म में बताया गया है कि किस तरह बच्चे जरायम की दुनिया का मुख्य हिस्सा हैं और उनके बातों-व्यवहार में ज़ुर्म ही शामिल है. उनमें बाल सुलभ मासूमियत दिखती ही नहीं. मात्र 12 साल की उम्र में वे अपनी तरक्की के लिए योजना बनाते हैं कि किस तरह अपना गैंग बनाया जाए. क़त्ल, लूटपाट और अपहरण जैसे अपराधों को वे किस तरह अंजाम देते हैं, यही इस फिल्म में दिखाया गया है. इसी क्रम में उनसे एक व्यक्ति का कत्ल हो जाता है. जब वे जेल जाते हैं तो उनका सामना एक कड़क जेलर से होता हैं. जेल में वे सुधरने के बजाय इस दलदल में और फंसते चले जाते हैं और जब वे जेल से छूटकर बाहर निकलते हैं, तब तक जुर्म की दुनिया के विशेषज्ञ बन चुके होते हैं. फिल्म में शरमन जोशी विजय के रोल में हैं, जो खतरनाक योजनाएं बनाने में माहिर है. फारुख कबीर याकूब की भूमिका निभा रहे हैं और नसीरूद्दीन शाह जेलर की. यह फिल्म आगामी 12 नवंबर को रिलीज होगी.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

प्रीति का स्लिम अवतार

काफ़ी समय से प्रीति जिंटा बी-टाउन से निकल कर क्रिकेट की गलियों को रोशन कर रही थीं. आईपीएल में मिली नाकामी से प्रीति ने सबक लिया. अब उन्हें लंबे समय से बॉलीवुड से दूर रहने का मलाल हो रहा है. इन दिनों वह माया मिली न राम वाली स्थिति से दो-चार हैं. प्रीति आईपीएल की क्वीन बनना चाहती थीं, उन्हें उम्मीद थी कि इस व्यवसाय से नाम और पैसा दोनों ही भरपूर मिलेगा, पर अंतत: निराशा ही हाथ लगी. प्रीति ने आईपीएल के कारण कई फिल्में ठुकरा दीं, जो बॉक्स ऑफिस पर सुपरहिट रहीं. इनमें फिल्म इश्किया और रोबोट भी शामिल हैं. प्रीति अब आईपीएल से बाहर निकल आई हैं और जल्द ही बॉलीवुड में पूरे ज़ोर-शोर से एंट्री करने वाली हैं. उन्होंने अपना वजन काफ़ी कम कर लिया है. इस स्लिम अवतार में वह काफ़ी ग्लैमरस और हॉट नज़र आ रही हैं. उनका अब पूरा ध्यान फिल्मों पर केंद्रित है. आख़िरी बार सक्रिय रूप से प्रीति 2008 में पर्दे पर दिखी थीं. उसके बाद वह विदेश और हर पल जैसी गिनी-चुनी फिल्मों में दिखीं. बॉलीवुड से प्रीति की दूरी की वजह यह है कि वह एक साथ आईपीएल और फिल्म दोनों पर ध्यान नहीं दे सकती थीं. ख़ैर, प्रीति अब बी-टाउन यानी अपने पैशन की तरफ लौट आई हैं और ख़ुद को मिल रहे अटेंशन से वह काफ़ी खुश हैं कि बॉलीवुड के निर्माता-निर्देशक उन्हें अभी भी भूले नहीं और उनके साथ काम करने के लिए बेक़रार हैं. प्रशंसकों के लिए ख़ुशख़बरी यह भी है कि प्रीति बहुत जल्द एक साथ कई फिल्मों में दिखने वाली हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया

बिहार झारखंड

दिल्ली, 01 नवंबर–07 नवंबर 2010

www.chauthiduniya.com

निशाना चूक गया

एनडीए को लगने लगा है कि अगर उसका अति पिछड़ा तीर निशाने पर नहीं लगा तो उसे चुनावी नुक़सान हो सकता है, क्योंकि शुरू के दो चरणों के चुनाव में यह साफ़ हो गया कि विकास मुद्दा नहीं बन पाया. लालू प्रसाद एवं रामविलास पासवान के लिए राहत की बात यह रही कि कोसी एवं सीमांचल के इलाक़े में माय समीकरण एकजुट रहा.

सरोज सिंह

विकास की लाख रट लगाने के बावजूद शुरू के दो चरणों के मतदान में विकास चुनावी मुद्दा नहीं बन पाया. जाति के आधार पर होने वाले बिहार के चुनावों की दिशा बदलने के लिए नीतीश कुमार का इस तरफ किया गया कोई भी प्रयास रंग नहीं ला सका. यहां तक की मीडिया के नीतीशीकरण का भी प्रभाव वोटरों पर नहीं पड़ा और बिहार में जातीय ताने–बाने के बीच स्थानीय मुद्दों और उम्मीदवारों की अपनी छवि के घेरे में वोट पड़े. संतोष की बात यह रही कि चुनावी हिंसा के लिए बदनाम बिहार में कुल मिलाकर शांतिपूर्वक वोट पड़ रहे हैं. पचास फ़ीसदी से ज़्यादा वोट पड़े, जिसका मतलब साफ़ है कि लोगों में उत्साह है और वे कई स्थापित एवं वातानुकूलित कमरों में बैठकर बनाए गए हवाई समीकरणों को तहस–नहस करने के लिए बेताब हैं.

चुनाव की अधिसूचना के बाद से ही एनडीए की तरफ़ से यह कोशिश शुरू हो गई कि विकास को चुनावी मुद्दा बनाकर लोगों से वोट मांगा जाए. सूबे में बनी कुछ सड़कों, अस्पतालों और स्कूल भवनों को दिखाकर नीतीश कुमार ने वोट मांगने की रणनीति बनाई. अगली सरकार बनने पर घर–घर बिजली देने का वादा भी किया गया. यह रणनीति इसलिए भी ज़रूरी थी कि एनडीए का जातीय ताना–बाना उसे जीत की गारंटी नहीं दे रहा था. राजपूत, भूमिहार एवं ब्राह्मण मतदाताओं से पूरे समर्थन की उम्मीद एनडीए को नहीं थी. इन मतदाताओं की क़ीमत पर अल्पसंख्यकों, अति पिछड़ों और महादलितों को अपने पाले में लाने का पूरा प्रयास हुआ. लेकिन शुरू के दो चरणों का जो रुख़ देखने को मिला, उससे लगता है कि नीतीश कुमार का तीर पूरी तरह निशाने पर नहीं लग पाया. कोशी एवं सीमांचल के इलाक़े में माय यानी मुसलमान–यादव का समीकरण एकजुट दिखा. पिछले चुनाव में इस समीकरण के दरकने का फ़ायदा एनडीए को मिला था. जैसा कि अनुमान था कि मुसलमानों को जहां यह लगा कि कांग्रेस अच्छी स्थिति में है, वहां उन्होंने हाथ का साथ दिया. अति पिछड़े एवं महादलित वोटरों ने इलाक़ों और उम्मीदवारों के अनुसार अपना मतदान किया. एनडीए के लिए यही बात परेशानी खड़ी कर सकती है.

अगड़े तो पहले से ही नाराज़ थे, अब जब अति पिछड़ों एवं महादलितों में भी हिस्सेदारी हो रही है तो सांस फूलना स्वाभाविक है. अति पिछड़े एवं महादलित वोटों का पूरा हिस्सा लेने का फ़ायदा न मिलता देख एनडीए ऩेताओं ने इस बिरादरी के सारे नेताओं को मतदाताओं की गोलबंदी में उतार दिया है. बाद के चरणों के चुनाव में अगड़ी जातियों एवं अति पिछड़ों की अहम भूमिका होने वाली है, इसलिए नुक़सान की भरपाई के लिए जातीय तीर भी छोड़े जा रहे हैं. एनडीए को लगने लगा है कि अगर उसका अति पिछड़ा तीर निशाने पर नहीं लगा तो उसे चुनावी नुक़सान हो सकता है, क्योंकि शुरू के दो चरणों के चुनाव में यह साफ़ हो गया कि विकास मुद्दा नहीं बन पाया. लालू प्रसाद एवं रामविलास पासवान के लिए राहत की बात यह रही कि कोशी एवं सीमांचल के इलाक़े में माय समीकरण एकजुट रहा. पिछले चुनाव में एनडीए ने कोशी में राजद का सफ़ाया कर दिया था, लेकिन इस मतदान के बाद पार्टी की उम्मीद बढ़ी है. ख़ासकर सहरसा, सिहेंश्वर, मधेपुरा, ठाकुरगंज, कोचाधामन और अररिया जैसी सीटों पर राजद एवं लोजपा को काफ़ी उम्मीदे हैं. इसी तरह समस्तीपुर और मुजफ्फरपुर में जिस तरह वोट पड़े हैं, उससे राजद एवं लोजपा के नेता उत्साहित हैं. राजद एवं लोजपा ने अगले चरण के चुनाव के लिए अगड़ी जातियों के प्रभाव वाले इलाक़ों पर ख़ास ध्यान देना शुरू कर दिया है. लालू एवं पासवान दोनों इन इलाक़ों में जा रहे हैं और उन्हें यह भरोसा दिला रहे हैं कि अगर सरकार बनी तो उनके मान–सम्मान की पूरी तरह रक्षा की जाएगी. कांग्रेस भी अपने गेम प्लान के हिसाब से चल रही है. कोशी एवं सीमांचल के इलाक़े में पार्टी को जो समर्थन मिला, उससे पटना से लेकर दिल्ली तक के नेता जोश में आ गए. निर्मली, सुपौल, सिमरी बख्तियारपुर, कुशेश्वरस्थान, आलमनगर, बिहारीगंज, किशनगंज एवं मोरवा जैसी सीटों पर कांग्रेस ने उम्मीद बांध रखी है. अगले चरण के चुनावों के लिए कांग्रेस ने अपने चुनाव प्रचार को और भी आक्रामक बना दिया है.

> **चुनाव की अधिसूचना के बाद से ही एनडीए की तरफ़ से यह कोशिश शुरू हो गई कि विकास को चुनावी मुद्दा बनाकर लोगों से वोट मांगा जाए. सूबे में बनी कुछ सड़कों, अस्पतालों और स्कूल भवनों को दिखाकर नीतीश कुमार ने वोट मांगने की रणनीति बनाई. अगली सरकार बनने पर घर-घर बिजली देने का वादा भी किया गया.**

पार्टी को लग रहा है कि जिस तरह का समर्थन उसे मिल रहा है, उससे हर हाल में सत्ता की चाबी उसके हाथ में लगनी तय है. हालांकि पार्टी के कुछ नेता इससे ज़्यादा की उम्मीद कर रहे हैं. पार्टी के लिए संतोष की बात यह भी रही कि ज़्यादातर सीटों पर मुक़ाबले को त्रिकोणात्मक बनाने में वह सफल रही. कांग्रेसी नेता इसे प्रदेश में पार्टी के बढ़ते जनाधार के तौर पर देख रहे हैं. कांग्रेस के लिए राहत की बात यह भी है कि उसके प्रदेश के सभी बड़े नेता अपने चुनाव से मुक्त हो गए हैं. इन नेताओं में महबूब अली कैसर, अशोक राम, लवली आनंद, रंजीता रंजन एवं नागमणि शामिल हैं. इसके अलावा भूमिहार बहुल इलाक़ों में ललन सिंह एवं अखिलेश सिंह का प्रचार भी रंग ला रहा है. बाहर से थोपे गए नेताओं की भले ही आलोचना हुई हो, पर चुनावी अखाड़े में इसका फ़ायदा पार्टी को मिलता नज़र आ रहा है. मोरवा, कुर्था, मधुबन, जमुई आदि कई सीटों पर कांग्रेस दौड़ में है. वामदलों एवं निर्दलीय प्रत्याशियों का प्रभाव शुरू के दो चरणों के चुनाव में ज़्यादा नहीं दिखाई पड़ा. इन दो चरणों के रुख़ को देखते हुए भाजपा ने अपने सभी स्टार प्रचारकों को मैदान में झोंक दिया. नाराज़ चल रहे शत्रुघ्न सिन्हा को भी मना लिया गया और उन्हें प्रचार में उतार दिया गया. भाजपा अध्यक्ष नितिन गडकरी भी यहां प्रचार में पूरा समय दे रहे हैं. उनकी अध्यक्षता में यह पहला चुनाव है, इसलिए वह यह साबित करने पर तुले हैं कि उनका पद ग्रहण करना पार्टी के लिए शुभ है. भाजपा को नरेंद्र मोदी की कमी इस चुनाव में खलने लगी है. पार्टी नेता भले ही चुनाव के दौरान अपनी नाराज़गी छुपा रहे हैं, मगर यह ज़रूर महसूस कर रहे हैं कि अगर नरेंद्र मोदी होते तो कोशी एवं सीमांचल के इलाक़े में भाजपा को काफ़ी फ़ायदा मिलता. कुछ नेता बताते हैं कि अगर चुनाव परिणाम गड़बड़ाया तो नरेंद्र मोदी मामले को वे मुद्दा बनाएंगे. भाजपा ने टिकट के मामले में अगड़ों का ध्यान ज़रूर रखा, पर वोट का जो पैटर्न दिख रहा है, उस हिसाब से पार्टी को ज़्यादा लाभ मिलता दिखाई नहीं पड़ रहा है. अब एनडीए की पूरी कोशिश शुरू में हो चुके नुकसान को कम से कम करने की है, क्योंकि राजद एवं कांग्रेस की आक्रामकता उस पर भारी पड़ने लगी है. एनडीए संभलने की कवायद में जुटा है, क्योंकि विकास, अल्पसंख्यकों और अति पिछड़ों का तीर शुरुआती चरण में निशाने पर नहीं लग पाया. बाद के चरणों में कोई चूक न हो, इसके लिए युद्धस्तर पर तैयारी जारी है.

feedback@chauthiduniya.com

गया शहर से कांग्रेस ने राजद के नेता मोहन श्रीवास्तव को टिकट दे दिया. वहीं लोजपा ने जद-यू के व्यवसायी प्रकोष्ठ के अध्यक्ष राजू बर्णवाल को गया शहर विधानसभा क्षेत्र में अपने बंगले की रखवाली की ज़िम्मेदारी सौंप दी.

कांग्रेस के टिकट पर ताल ठोक रहे अर्जुन मंडल को अपनी सादगी और राहुल गांधी के करिश्मे पर भरोसा है. पिछले चुनाव में यहां से नरेंद्र सिंह के बेटे अभय सिंह ने विजय प्रकाश को हराकर जीत दर्ज की थी.

चुनावी तड़का

जाना था जापान पहुंच गए...

जाना था जापान पहुंच गए चीन समझ गए ना... यह गीत अक्सर किसी न किसी हस्ती पर लागू होता रहता है. हाल में यह दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित पर लागू हुआ. दरअसल हुआ यह कि शीला मोहिउद्दीन नगर विधानसभा क्षेत्र में कांग्रेस प्रत्याशी की सभा में प्रचार के लिए जा रही थीं, लेकिन रास्ते में उनका हेलीकॉप्टर भटक गया. बेचारी वहां जा ही नहीं पाईं. अंदौर हाईस्कूल परिसर में उनकी चुनावी सभा होनी थी, लेकिन उनका हेलीकॉप्टर रास्ता भटक कर ऊपर से ही लौट गया. प्रशासन के मुताबिक़, सिग्नल न मिलने के चलते ही ऐसा हुआ.

ज़रा संभल के लालू जी!

कभी-कभी भाषण देते समय कुछ नेता इतने उत्तेजित हो जाते हैं कि मंच ही टूट जाता है. ऐसा ही भारी-भरकम भाषण इस बार लालू यादव ने दे डाला. नतीजतन मंच टूट गया और लालू जी राबड़ी देवी समेत मंच से नीचे आ गिरे. सोनपुर विधानसभा क्षेत्र के शिकार पंचायत अंतर्गत संबलपुर कचहरी के मैदान में अचानक उस समय अफरातफरी मच गई, जब राजद प्रमुख लालू प्रसाद के संबोधन के दौरान मंच ध्वस्त हो गया. इस घटना में हालांकि कोई चोटिल नहीं हुआ, लेकिन हम तो यही कहेंगे कि लालू जी, ज़रा संभल कर... अभी आपको कई और चुनावी सभाएं करनी हैं.

हिमालय पर पूजा-पाठ करेंगे

कुछ टीवी चैनलों ने चुनाव परिणामों को लेकर जो सर्वे दिखाया, उससे विपक्ष के कुछ नेता बेहद ख़फ़ा हैं. चैनलों ने एक सुर से कहा कि नीतीश कुमार फिर सत्ता में आ रहे हैं. एक चैनल ने जब एनडीए के पक्ष में 170 सीटों का अनुमान लगा दिया तो विपक्षियों का धैर्य टूट गया. राजद नेता राम बिहारी सिंह कहने लगे कि अगर यही सही है तो हम लोग यहां राजनीति करके क्या करेंगे. इससे तो बेहतर है कि हिमालय पर जाकर पूजा-पाठ करें. इस चैनल ने राजद को 26 सीटों पर समेट दिया. राम बिहारी सिंह की नाराज़गी का आलम यह था कि उन्होंने अपने टीवी सेट पर इस चैनल को ही लॉक करा दिया.

करिश्मा तो नहीं करेंगी करीना

सिकंदरा विधानसभा क्षेत्र से निर्दलीय चुनाव लड़ रही करीना पासवान का क्रेज युवा वोटरों में परवान चढ़ रहा है. टक्कर की लड़ाई का एहसास होने के बावजूद इलाक़े के युवा वोटर पूरे जोश के साथ करीना के लिए लगे हैं. वोटरों को समझाया जा रहा है कि हालात बदल रहे हैं, करीना के पक्ष में माहौल बन रहा है. बुज़ुर्ग वोटरों को बताया जा रहा है कि चचा देख लीजिएगा, जब 24 नवंबर को रिजल्ट निकलेगा. युवा समर्थकों के जाने के बाद बुज़ुर्ग कहते हैं, करिश्मा तो नहीं करेंगी करीना.

दिल जीता, चुनाव भी जीतेंगे

चकाई विधानसभा से राकांपा प्रत्याशी नेपाली सिंह संतोष में हैं. चुनाव प्रचार के दौरान लोगों से इतना प्यार पाया कि टिकट पाने में हुई सारी थकान दूर हो गई. हर जाति-धर्म के लोगों ने दिल खोलकर स्वागत किया तो कहने लगे कि मैंने तो सब कुछ पा लिया. जितना सोचा भी न था, उससे कहीं अधिक प्यार मुझे चकाई विधानसभा क्षेत्र की जनता ने दिया है. इतने में एक समर्थक ने याद दिलाया, यह तो ठीक है, पर चुनाव के रिजल्ट का क्या होगा. इस पर नेपाली सिंह तपाक से बोले, अरे चिंता क्यों करते हो, लोगों का दिल जीत लिया है, चुनाव भी जीत लेंगे.

रवि किशन का सियासी आलाप

भोजपुरी फिल्मों में बाहुबली से लेकर रंगबाज दारोगा तक कई किरदार निभा चुके रवि किशन आजकल सियासी गान गा रहे हैं. उनका यह सियासी गान कांग्रेस के लिए है. दरअसल रवि आजकल कांग्रेस के स्टार प्रचारक बने हुए हैं. वह कहते हैं कि छोटी-छोटी पार्टियों की नीति और सिद्धांतों में उन्हें विश्वास नहीं है. इसलिए कांग्रेस का बिहार में जीतना और सरकार बनाना ज़रूरी है. छोटी-छोटी पार्टियों में यकीन न रखने वाले इस भोजपुरी स्टार को शायद याद नहीं रहा कि अपने शुरुआती दिनों में वह कितने बड़े अभिनेता थे.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

गया: डगर आसान नहीं है

सुनील सौरभ

दक्षिण बिहार के केंद्र बिंदु गया ज़िले के दस विधानसभा क्षेत्रों में मगध और बिहार की राजनीति में ख़ुद को दिग्गज मानने वाले प्रत्याशियों की प्रतिष्ठा दांव पर लगी है. बिहार विधानसभा अध्यक्ष उदय नारायण चौधरी इमामगंज से, पथ निर्माण मंत्री प्रेम कुमार एवं भाकपा के राज्य सचिव रहे पूर्व सांसद जलालुद्दीन अंसारी गया नगर से, प्रौद्योगिकी मंत्री अनिल कुमार टिकारी से, पूर्व मंत्री सुरेंद्र यादव बेलागंज से, लोजपा के राष्ट्रीय महासचिव सर्वजीत बोधगया से और अवधेश कुमार सिंह वजीरगंज से चुनाव मैदान में हैं. दो चरणों में हो रहे चुनाव का दिन जैसे-जैसे नज़दीक आ रहा है, दिग्गजों का मतदाताओं से मिलना-जुलना भी तेज़ होता जा रहा है. इन दिग्गजों में सबसे ज़्यादा मुश्किल में फंसे हैं बिहार विधानसभा अध्यक्ष उदय नारायण चौधरी, जिनके ख़िलाफ़ प्रतिबंधित नक्सली संगठन भाकपा माओवादी ने क्षेत्र से बाहर रहने का फरमान जारी कर लोगों से चुनाव बहिष्कार का आह्वान किया है. चौधरी पर माओवादियों ने क्षेत्र की उपेक्षा और राजनीतिक मतलब साधने का आरोप लगाया है. नए परिसीमन में गुरुआ का भूगोल बदलने और नवसृजित शेरघाटी विधानसभा क्षेत्र के मुस्लिम बहुल हो जाने से शकील अहमद खान निर्णय नहीं ले पा रहे हैं कि वह कहां से चुनाव लड़ें. यही कारण है कि अभी तक राजद ने दोनों क्षेत्रों से अपने उम्मीदवार के नाम की घोषणा नहीं की है. पिछले एक दशक से विधायक एवं मंत्री पद का आनंद उठा चुके शकील अहमद इस बार कोई ख़तरा नहीं उठाना चाहते.

लोजपा के राष्ट्रीय महासचिव सर्वजीत फतेहपुर को परिसीमन के तहत बोधगया विधानसभा क्षेत्र से जोड़ दिए जाने से मुश्किल में पड़ गए हैं. बदले परिसीमन ने प्रेम कुमार के लिए भी परेशानी पैदा कर दी है. इसकी वजह यह है कि भाजपा प्रभावित पटवा टोली, लक्खीबाग एवं जनकपुर आदि क्षेत्र कटकर वजीरगंज का हिस्सा बन गया है. वजीरगंज विधानसभा क्षेत्र से कांग्रेस प्रत्याशी एवं वर्तमान विधायक अवधेश कुमार सिंह की डगर भी आसान नहीं है. उनकी परेशानी विभिन्न दलों से चुनाव समर में उतरे स्वाजातीय उम्मीदवारों ने बढ़ा दी है. भाजपा ने वीरेंद्र सिंह और राजद ने राजेश कुमार टुन्नू को मैदान में उतारा है. रवींद्र प्रताप निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में किस्मत आज़मा रहे हैं. भाकपा के प्रदेश सचिव रहे पूर्व सांसद जलालुद्दीन अंसारी भी मतदाताओं के चक्रव्यूह में फंसे हैं. लोजपा ने गया शहर से अपने ज़िला अध्यक्ष अताउल्लाह खान को प्रत्याशी बनाया है, जो जलालुद्दीन अंसारी के रास्ते में रोड़े बिछा सकते हैं. मंत्री एवं सांसद रहे बेलागंज के विधायक सुरेंद्र प्रसाद यादव की मुश्किलें भी परिसीमन से बढ़ी हैं. भूमिहार बहुल और सुरेंद्र यादव समर्थित कई गांव जैसे भोरी, भवनपुर एवं गुलजाना आदि बेलागंज से कटकर टिकारी विधानसभा क्षेत्र के हिस्से बन गए हैं. टिकारी से चुनाव लड़ रहे कैबिनेट मंत्री अनिल कुमार को भी जद-यू के जातीय समीकरण में भितरघात की आशंका है. कुल मिलाकर गया के विभिन्न विधानसभा क्षेत्रों से चुनाव लड़ रहे दिग्गजों की डगर आसान नहीं है.

अनिल कुमार, अवधेश सिंह, उदय नारायण चौधरी, प्रेम कुमार, शकील अहमद, सुरेंद्र यादव, सर्वजीत कुमार

feedback@chauthiduniya.com

दलबदलुओं की चांदी, कार्यकर्ता उपेक्षित

चुनाव के पूर्व यात्रा, कार्यकर्ता सम्मेलन और सदस्यता अभियान चलाने वाले राजनीतिक दलों का असली चेहरा टिकट बंटवारे के दौरान नज़र आया. हाथ में बायोडाटा और पार्टी की वफ़ादारी का तमगा लेकर घूम रहे कार्यकर्ताओं की हालत बड़े बेआबरू होकर तेरे कूचे से हम निकले वाली रही. मगध प्रमंडल में यह स्थिति ज़्यादा देखने को मिली. सभी दलों ने टिकट बंटवारे में कार्यकर्ताओं की वफ़ादारी को दरकिनार कर दलबदल करके आने वालों को टिकट से नवाज़ा. कोई भी दल इस मामले में सफ़ाई देने की स्थिति में नहीं है. सभी दलों के कार्यकर्ता- नेता इस रवैये से मायूस हैं. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य रहे अभिराम शर्मा को जहानाबाद विधानसभा क्षेत्र से जद-यू का टिकट मिला तो दूसरी ओर कुर्था विधानसभा क्षेत्र से जद-यू की मंत्री रहीं सुचित्रा सिन्हा को कांग्रेस ने हाथोंहाथ लिया. इनके पति नागमणि दलबदल में रिकॉर्ड कायम कर चुके हैं. नवादा की निर्दलीय विधायक पूर्णिमा यादव और उनके पति एवं गोविंदपुर से निर्दलीय विधायक कौशल यादव को इस बार जद-यू ने अपना प्रत्याशी बनाया है. गया ज़िले के वजीरगंज विधानसभा क्षेत्र से भाजपा छोड़कर आए अमरेंद्र सिंह डब्लू को लालू का आशीर्वाद मिला. गया शहर से कांग्रेस ने राजद के नेता मोहन श्रीवास्तव को टिकट दे दिया. वहीं लोजपा ने जद-यू के व्यवसायी प्रकोष्ठ के अध्यक्ष राजू बर्णवाल को गया शहर विधानसभा क्षेत्र में अपने बंगले की रखवाली की ज़िम्मेदारी सौंप दी. बोधगया सुरक्षित विधानसभा क्षेत्र में कांग्रेस को अपनी सुरक्षा कम्युनिस्ट पार्टी के तीन बार विधायक रहे बालिग राम में नज़र आई. शेरघाटी विधानसभा क्षेत्र में जद-यू ने राजद छोड़कर आए विनोद यादव को गले लगाया. वैसे टिकट के लालच में दल बदलने वाले बहुत से नेताओं को निराशा हाथ लगी, उनकी हालत जाएं तो जाएं कहां वाली है. नए दल में वह बाहरी हैं और पुराने दल से निकल आए हैं. दल बदल कर आने वालों को पार्टी के वरिष्ठ नेताओं ने भले ही स्वीकार कर लिया हो, लेकिन कार्यकर्ताओं के लिए वे अभी तक बाहरी हैं. नतीजा यह है कि ऐसे टिकटधारियों का जुड़ाव कार्यकर्ताओं से नहीं हो पा रहा है. दल बदल कर आए उम्मीदवारों को पार्टी के स्थानीय नेताओं एवं टिकट के दावेदारों का अपेक्षित समर्थन न मिलने से परेशानी झेलनी पड़ रही है और चुनाव परिणाम पर भी असर पड़ने की आशंका है. कुल मिलाकर मगध प्रमंडल का राजनीतिक माहौल गर्म है. दलबदलुओं ने राजनीतिक कार्यकर्ताओं को असमंजस में डाल दिया है और वे भी आगे मतलब की राजनीति का सहारा ले सकते हैं. दलीय वफ़ादारी करने वालों के लिए टिकट बंटवारे का यह खेल एक झटका है.

मोहन श्रीवास्तव, कौशल यादव

उद्यमी करें काज, सरकार करे राज

लक्ष्मीकांत चौधरी, पुष्पा चोपड़ा, राजेंद्र पीडी सिंहा, विजय गोयंका, बलराज कपूर, मुकेश कुमार, जितेंद्र कुमार

बिहार धातु एवं खनन क्षेत्र की विशाल कंपनी वेदांता के मुखिया अनिल अग्रवाल की जन्मभूमि है. उनका उड़ीसा निवेश राजनीतिक उठापटक के चलते रद्द कर दिया गया. बकौल अग्रवाल, अब मैं ख़ून के आंसू रो रहा हूं. ऐसे राजनीतिक परिदृश्य में बिहार को कर्मभूमि बनाने वाले उद्योगपति निवेश के मुद्दे पर क्या सोचते हैं? निवेश की प्रक्रिया पर नीतीश सरकार ने कितना काम किया या फिर सिर्फ़ दिखावा किया? उद्यमी समाज को नई सरकार से क्या अपेक्षाएं हैं? इन्हीं तमाम सवालों को लेकर हमने कुछ लोगों का मन टटोलने की कोशिश की.

श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद प्रा. लि. के मैनेजर लक्ष्मीकांत चौधरी का मानना है कि फार्मा उद्योग के क्षेत्र में सरकार की क्रय नीति बिहार के उद्योगों के संदर्भ में कारगर नहीं है, क्योंकि राज्य सरकार 50 करोड़ के टर्न ओवर वाली कंपनी से ही दवाएं ख़रीदती है. बिहार में मध्यम एवं छोटे फार्मा उद्योग सरकार की इसी नीति के कारण कमज़ोर हो रहे हैं. सरकार को चाहिए कि दवा क्रय नीति में 50 करोड़ के टर्न ओवर वाली बाध्यता को कम करके लाइसेंसिंग में सिंगल डोर पॉलिसी का क्रियान्वयन करे. महिला उद्यमी पुष्पा चोपड़ा का मानना है कि नीतीश सरकार ने आधारभूत संरचना का विकास किया है. क़ानून-व्यवस्था में सुधार हुआ है, परंतु नौकरशाही पूरी तरह हावी है. पुष्पा कहती हैं कि बिहार जैसे राज्य में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास करके ही निवेश का माहौल तैयार किया जा सकता है. इसमें रोज़गार की अपार संभावनाएं हैं, लेकिन इसका सही दोहन नहीं हुआ है. सरकार ने इस दिशा में कोई सार्थक प्रयास नहीं किया. उत्पाद को बाज़ार से जोड़ने हेतु संस्थागत प्रयास किए जाने चाहिए.

42 वर्षों से उद्योग का संचालन कर रहे दीपक पेंट्स प्रा. लि. के बलराज कपूर का कहना है कि नीतीश सरकार के आने से उद्यमियों का मनोबल बढ़ा है. क़ानून व्यवस्था में सुधार होने से पूंजी का पलायन रुका है. सुरक्षा की भावना बढ़ी है, अनिश्चितता घटी है. राज्य में निवेश का वातावरण तैयार हुआ है. कपूर कहते हैं कि मुख्यमंत्री की नीति और नीयत तो उद्योगों को बढ़ाने की रही, लेकिन बिहार औद्योगिक क्षेत्र विकास प्राधिकार के प्रबंध निदेशक के के पाठक ने उद्यमियों का मनोबल तोड़ा, उन पर क्रिमिनल केस लादे. कपूर चाहते हैं कि बिहार की बीमार इकाइयों को फिर से चालू किया जाए. बिजली का नियमित उत्पादन और वितरण सुनिश्चित किया जाए.

ब्रिटानिया बिस्कुट के लिए पैकेजिंग का काम करने वाले उद्यमी जितेंद्र कुमार का मानना है कि नीतीश सरकार ने क़ानून व्यवस्था में सुधार करके बेहतर माहौल बनाने का प्रयास किया, जिस कारण निवेश का माहौल बना है. सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों को विकसित करके ही उद्यम की प्रक्रिया को गति दी जा सकती है. सरकार को चाहिए कि वह कुटीर उद्योगों को संरक्षण दे, क्योंकि बिना संरक्षण के उद्योग टिक नहीं सकते. स्थानीय उद्यम द्वारा ही निवेश का वातावरण तैयार किया जा सकता है. मां फुलेश्वरी कोल्ड स्टोरेज प्रा. लि. के निदेशक राजेंद्र प्रसाद सिन्हा कहते हैं कि बिहार विभाजन के बाद उद्योगों की हालत काफ़ी ख़राब है. यहां मध्यम एवं लघु कुटीर उद्योग ही रह गए. नीतीश सरकार के दावे के बाद भी निवेशक नहीं आए. सिन्हा का मानना है कि उद्योगों के विकास के लिए सरकार को प्रोत्साहन नीति बनानी चाहिए. औद्योगिक जोन बनाने की अवधारणा का विकास करने पर बल देते हुए उन्होंने कहा कि उद्यमी अपने प्रयासों से उद्योग विकसित कर लेते हैं, लेकिन सरकार का समर्थन नहीं मिलता. कोल्ड स्टोरेज की क्षमता बढ़ाने की आवश्यकता है. सरकार को इस दिशा में प्रक्रियागत सुधार करना चाहिए. बिजली पर सरचार्ज हटाया जाए और फीडबैक कार्ययोजना लागू हो.

हेवी इस्पात के युवा उद्यमी विजय गोयनका कहते हैं कि उद्योग के क्षेत्र में जो माहौल था, उसमें काफ़ी बदलाव आया है. राज्य के उद्यमी फिर से बिहार में पैसा लगा रहे हैं. इससे बिहारी पूंजी का पलायन रुका है.

नौकरशाही से त्रस्त विजय का मानना है कि उद्योग से संबद्ध प्रक्रिया का सरलीकरण होना चाहिए. इसमें संस्थागत सुधार ज़रूरी है. बिहारी उद्यमियों को प्रोत्साहन देकर ही निवेश का माहौल तैयार किया जा सकता है. बिजली विभाग के निजीकरण की मांग करते हुए गोयनका ने उम्मीद जताई कि बिहार में बिहारियों को ही निवेश करना होगा. इसके लिए सरकार को भी सहयोग करना चाहिए. सरकार का काम राज चलाना है, जब वह बेहतर राज करेगी, तभी विकास होगा. यदि बिहार को बढ़ाना है तो निवेश को बढ़ावा देना ही होगा.

> उद्योगों के विकास के लिए सरकार को प्रोत्साहन नीति बनानी चाहिए. औद्योगिक जोन बनाने की अवधारणा का विकास करने पर बल देते हुए उन्होंने कहा कि उद्यमी अपने प्रयासों से उद्योग विकसित कर लेते हैं, लेकिन सरकार का समर्थन नहीं मिलता. कोल्ड स्टोरेज की क्षमता बढ़ाने की आवश्यकता है. सरकार को इस दिशा में प्रक्रियागत सुधार करना चाहिए.

मुकेश कुमार
feedback@chauthiduniya.com

शावकों की बूढ़े शेर से भिड़ंत

इमरान खान

समाजवादियों की धरती जमुई में दो शावकों को बूढ़े शेर का डर सता रहा है. ज़िले के महारथी नरेंद्र सिंह के बेटे अजय प्रताप सिंह एवं जय प्रकाश यादव के भाई विजय प्रकाश यहां से प्रत्याशी हैं और उन्हें कड़ी चुनौती दे रहे हैं बुज़ुर्ग कांग्रेसी नेता अर्जुन मंडल. तीनों प्रत्याशियों की अपनी अलग-अलग ताक़त है तो कमज़ोरियां भी हैं. मैदान मारने के लिए तीनों ने अपनी पूरी ताक़त झोंक दी है, पर इनकी कमज़ोरियां बाधक बन रही हैं. अजय प्रताप को अपने पिता पर भरोसा है तो विजय प्रकाश को अपने भाई की रणनीति पर. अजय जद-यू से चुनाव लड़ रहे हैं तो विजय प्रकाश राजद के प्रत्याशी हैं. कांग्रेस के टिकट पर ताल ठोक रहे अर्जुन मंडल को अपनी सादगी और राहुल गांधी के करिश्मे पर भरोसा है. पिछले चुनाव में यहां से नरेंद्र सिंह के बेटे अभय सिंह ने विजय प्रकाश को हराकर जीत दर्ज की थी. अभय की मौत के बाद उनके बड़े भाई अजय प्रताप पर पार्टी ने भरोसा किया. इस चुनाव से पहले राजनीति की दुनिया से दूर रहने वाले अजय प्रताप घर-घर जाकर अपने पिता का परिचय देकर वोट मांग रहे हैं तो विजय अपने भाई और लालू यादव का वास्ता दे रहे हैं. अजय विकास का सबूत दे रहे हैं तो विजय मतदाताओं से विकास का वादा कर रहे हैं. अजय के साथ राजपूत वोटरों की ताक़त है तो विजय के साथ यादवों का थोक वोट है. उधर अर्जुन मंडल वोटरों को बता रहे हैं कि मेरी जीत का मतलब है जमुई में शांति और विकास की गारंटी. अपने लिए अंतिम मौक़ा मांग रहे मंडल को कोयरी एवं कुर्मी मतदाताओं का पूरा समर्थन है. मुसलमानों का भी एक बड़ा तबका उनके साथ है. अर्जुन मंडल एवं विजय प्रकाश दोनों एक-एक बार जमुई से जीत चुके हैं, जबकि अजय यहां से पहली बार किस्मत आज़मा रहे हैं. इलाक़े में अपनी पहचान बनाने के लिए अजय पूरी मेहनत कर रहे हैं. विजय प्रकाश इस इलाक़े को अच्छी तरह जानते हैं, इसलिए काफ़ी संभल कर अपना अभियान चला रहे हैं. अर्जुन मंडल तो इस अखाड़े के पुराने खिलाड़ी हैं, इसलिए हर इलाक़े के वोटरों का मिज़ाज़ समझते हैं और उसी हिसाब से अपना प्रचार अभियान चला रहे हैं. कांग्रेस प्रत्याशी होने के कारण अर्जुन मंडल को भूमिहार, ब्राह्मण और मुस्लिम वोटरों पर भी पूरा भरोसा है. मौजूदा राजनीतिक स्थिति पर बात करें तो यह कहा जा सकता है कि तीनों ही प्रत्याशियों को अपनी पकड़ मज़बूत करने में पसीना निकल रहा है. तीनों दावा कर रहे हैं कि स्वजातीय वोटों के अलावा हर जाति-धर्म के वोटर उनका साथ दे रहे हैं, पर हक़ीक़त में असली निशाना अति पिछड़ा वोट है. जमुई के राजनीतिक समीकरण में इस बार अति पिछड़े वोट ही विजेता तय करेंगे. इस वोट बैंक का जितना बड़ा हिस्सा जिसे मिलेगा, वह उतना ही फ़ायदे में रहेगा. मुसलमान वोटरों का रुख़ भी चुनाव का रुख़ मोड़ सकता है. अति पिछड़ा वोटरों में मंडल की बन रही पैठ से अजय एवं विजय के कान खड़े हो गए हैं. यही वजह है कि इन दोनों ने भी पूरी ताक़त लगा दी है. वोटरों की बात करें तो उनका मानना है कि विकास अपनी जगह है, यहां तो जातीय ताने-बाने पर ही चुनाव होगा. जो प्रत्याशी जितनी जातियों में अपनी पकड़ बना पाएगा, वही विधानसभा जाएगा. कांग्रेस के पक्ष में भूमिहार वोटरों को गोलबंद करने के लिए ललन सिंह एवं अखिलेश सिंह ने पूरा ज़ोर लगा दिया है. राजपूत वोटों के लिए राजद रघुवंश बाबू का इस्तेमाल कर रहा है. जद-यू को कुर्मी वोटों के लिए नीतीश कुमार के करिश्मे पर भरोसा है. अजय प्रताप और विजय को जनता पर पूरा भरोसा है. अर्जुन मंडल कहते हैं कि जमुई को मैं विकास दूंगा. यहां के लोगों ने हमेशा मुझे प्यार दिया है और मेरे इस अंतिम चुनाव में भी वे पूरी तरह मेरे साथ दिल से जुड़ गए हैं. इन तीनों के अलावा प्रकाश भगत, पूनम देवी एवं निशांत पार्थसारथी भी यहां से भाग्य आज़मा रहे हैं, लेकिन असली मुक़ाबला दो शावकों और बूढ़े शेर के बीच दिख रहा है.

जमुई

अजय प्रताप सिंह, विजय प्रकाश, अर्जुन मंडल

feedback@chauthiduniya.com

हराने के लिए हमनाम का सहारा

चुनाव जीतने के लिए नेता हर तरह के हथकंडे आज़मा रहे हैं, लेकिन यह हथकंडा कुछ अलग है. राघोपुर और महनार विधानसभा क्षेत्र में विरोधियों को मात देने के लिए उनके हमनाम उम्मीदवार को चुनावी अखाड़े में उतार दिया गया. राघोपुर में जद-यू प्रत्याशी सतीश यादव से मिलते-जुलते नाम वाले सतीश सिंह को शिवसेना के टिकट पर तो महनार में मुंशी लाल राय के ख़िलाफ़ निर्दलीय के तौर पर मुंशी लाल राय को ही खड़ा करा दिया गया. दोनों ही चुनाव क्षेत्रों में लड़ाई आर-पार की है, इसलिए एक-एक वोट पर नेताओं की नज़र लगी हुई थी. राघोपुर से सतीश सिंह को खड़ा कर दोहरा मक़सद पूरा करने की कोशिश की गई. पहले तो सतीश नामक प्रत्याशी को खोजा गया, ताकि ईवीएम में सतीश यादव और सतीश सिंह का नाम आगे-पीछे रहे. इसके अलावा पार्टी के रूप में शिवसेना को चुना गया, ताकि तीर-धनुष चुनाव चिन्ह रहे. ग़ौरतलब है कि जद-यू का चुनाव चिन्ह तीर है. इसी तरह महनार में भी मुंशी लाल राय को चुना गया, ताकि ईवीएम में नाम आगे-पीछे रहे. यह सारा खेल इसलिए खेला गया, ताकि मतदाताओं को भ्रम में डाला जा सके और मज़बूत प्रत्याशी को वोटों का नुक़सान हो. राघोपुर के जद-यू प्रत्याशी सतीश यादव को अंतिम समय में जब इस खेल का पता चला तो उनके होश उड़ गए. आनन-फानन में समर्थकों की बैठक बुलाकर इस ख़तरे से निपटने की रणनीति तैयार की गई. तय किया गया कि किसी भी तरह सतीश सिंह को बैठाया जाए. कैसे बैठाया जाए, इसके लिए दोहरी रणनीति बनाई गई. पहले तय हुआ कि सारी योजना पूरी तरह गुप्त रखी जाएगी. विरोधी खेमे को भनक न लगे, इसलिए ऑपरेशन में ख़ास लोगों को रखा गया. दूसरा कदम सतीश सिंह को खोजने और उसे हर हाल में बैठाने के लिए उठाया गया. दस-बारह गांव खंगालने के बाद सतीश सिंह को खोजा गया और उसे मनाने के लिए किसान प्रकोष्ठ के अनिल सिंह को लगाया गया. देर रात तक मनाने का दौर चला और सुबह नामांकन वापस लेने की बात तय हो गई. सतीश सिंह ने वादे के मुताबिक़ सतीश यादव के समर्थन में नाम वापस ले लिया. बताया जाता है कि सतीश सिंह को खड़ा करने के लिए हवाई जहाज से रांची से उसका टिकट मंगवाया गया, ताकि अंतिम समय में नामांकन कराया जा सके. सूत्रों ने बताया कि सतीश सिंह को कुछ प्रलोभन भी दिया गया. इसी तरह महनार में राजद के बाग़ी एवं पूर्व मंत्री मुंशी लाल राय के ख़िलाफ़ मुंशी लाल राय को उतार कर खेल बिगाड़ने का खेल खेला गया, लेकिन यहां मुंशी लाल को खड़ा करने वाले इतने होशियार थे कि उन्होंने पूर्व मंत्री मुंशी लाल राय को इसकी भनक भी नहीं लगने दी. इस वजह से पूर्व मंत्री मुंशी लाल राय निर्दलीय खड़े मुंशी लाल राय को बैठा नहीं पाए. उधर ठेकेदार मुंशी लाल राय की पत्नी चनरी देवी ने एसपी-वैशाली को पत्र लिखकर लोजपा विधायक एवं स्थानीय उम्मीदवार रामा सिंह और उनके सहयोगियों पर अपने पति का अपहरण करने, धमका कर ज़बरन नामांकन कराने और बंधक बनाकर अज्ञात स्थान पर रखने का आरोप लगाया. कुल मिलाकार जीतने के लिए प्रत्याशी किसी भी हद तक जाने से गुरेज नहीं कर रहे हैं.

सतीश सिंह बनाम सतीश कुमार

मुंशीलाल बनाम मुंशीलाल राय

सरोज सिंह
feedback@chauthiduniya.com

बेहद गरीब परिवार में जन्मे अलौली विधानसभा के कांग्रेस प्रत्याशी राजेश कुमार सदा आज खगड़िया जिले के अलौली विधानसभा ही नहीं अपितु पूरे बिहार में इसलिए दलित- महादलित सहित आमजनों के खासम-खास बने हुए हैं क्योंकि इन्होंने भूखे रहकर, जनप्रतिनिधि नहीं रहते हुए भी आज तक अलौली की जनता की समस्याओं के निदान और समाधान के प्रति बेहद रूचि दिखाई है. आज पहली बार यह जनता मालिक के सामने बतौर कांग्रेस प्रत्याशी खड़े हैं। आम मतदाताओं का स्पष्ट कहना है कि श्री सदा के नाना नवल किशोर प्रसाद उर्फ नागा सिंह भारत के एक कर्मठ सेवक के रूप में जाने जाते रहे. जबकि इनकी मां श्रीमति मनोरमा देवी महज 12 वर्ष की उम्र से ही देश व समाजसेवा में जुट गई, इतना ही नहीं विशेष अभिरूचि लेते हुए गरीब व जरूरतमंद लोगों की अनवरत सेवा करती रहीं, बाद में भूमि संघर्ष के दौरान वह दरभंगा जेल में भी बंद रहीं। अलौली विधानसभा क्षेत्र में रामविलास पासवान एवं स्व. मिश्री सदा के साथ-साथ होने के बाद भी समाज सेवा में तल्लीन रहीं, जहां तक राजेश कुमार सदा की बात है तो वह अभिवंचित वर्गो के लिए निरंतर आंदोलन करते कांग्रेस प्रत्याशी हुए आज पहली बार आम मतदाताओं के सामने बतौर कांग्रेस प्रत्याशी हैं. निरंतर आंदोलन करते हुए सामनता की लड़ाई लड़ने वाले अलौली विधानसभा क्षेत्र के मतदाताओं के लिए संघर्ष की लड़ाई लड़ते रहने वाले श्री सदा के समर्थकों के मुताबिक लगभग 33 वर्षो से अलौली का प्रतिनिधित्व करने वाले रामविलास पासवान के भाई पशुपित कुमार पारस के जीत के बाद इलाके में नहीं रहकर दिल्ली की सैर करते रहे है, नतीजतन इस बार अलौली के कांग्रेस प्रत्याशी

राजेश कुमार सदा को "हाथ छाप" पर मुहर लगाकर जीताना जरूरी है, ताकि खगड़िया जिले के सर्वाधिक पिछड़े विधानसभा क्षेत्र अलौली का सर्वागींण विकास संभव हो सके।

निवेदक
साधना देवी
समाजसेवी
अलौली विधानसभा खगड़िया

महर्षि मेहीं कॉलेज ऑफ पॉलिटेकनिक एण्ड पारा मेडिकल
हॉस्पीटल रोड, खगड़िया
(Courses Approved by UGC. AICTE, DEC, Ministry of HRD, Government of India)

B.Ed Approved by NCTE, MBA all stream
GNM Aoorøved by Nursing Council
POLYTECHNIC
Diploma in Mechanical, Civil, Electrical, Electronics & Communication & Computer Engineering
PARAMEDICAL
Master of Physiotherapy. Occupational Therapy, Medical Lab Technology, Radiation Technology, Optomerty and Ophthalmic Technology.
Bachelor of Physiotherapy. Occupational Therapy, Medical Lab Technology, Radiation Technology, Optomerty and Ophthalmic Technology.
PG Diplome in Drug Regulatory Affairs, Hospital Health Management, Geriatric Medicine, Maternal & Child Health.
Diploma in Medical Lab Technology, Ophthalmic Technology, Operation Theatre Technology, ECG Technology, Radiography Technology.
Contact No : 9431480925, 9852274380

जीवन वृत्त
धर्मेन्द्र कुमार
(B.Tech)
पिता- श्री चन्द्रशेखर प्र. यादव, आवास बोर्ड, खगड़िया
राज़नीतिक गुरू- बड़े भाई डा. विवेकानन्द
एसोसियेट प्रो० कटिहार मेडिकल, कॉलेज

सामाजिक गतिविधि

- बाढ़ के स्थायी निदान के लिए आन्दोलन 2004.
- 2004 के खगड़िया के बाढ़ में 2 महीने तक सरकार की सहमति से सदर अस्पताल में जेनरेटर चलाया तथा डाइरिया का दवा दिया।
- 2004 एवं 2007 के बाढ़ के दौरान सभी पंचायत में डाइरिया का कैम्प लगाया। खगड़िया विधान सभा में एक भी आदमी को डाइरिया से मरने नहीं दिया।
- 2005 में फरवरी एवं नवम्बर में विधानसभा चुनाव लड़ा 800 एवं 12000 मत प्राप्त किया।
- 2006 में 21 तकनिकी शिक्षण संस्थानसमूह का शिलान्यास प्रसिद्ध) उद्योगपति एवं समाज सेविका श्रीमती अमला रूइयॉ से कराया।
- 2009 के मार्च में सरकार द्वारा श्यामलाल चन्द्रशेखर नर्सिंग स्कूल को मान्यता दिलाया।
- 2009 के सितम्बर में 180 सीट का श्याम लाल चन्द्रशेखर पारा मेडिकल संस्थान को सरकार द्वारा मान्यता दिलाया।
- 2007 में शहीद प्रभुनारायण मल्टी स्पेशियेलिटी हॉस्पीटल का उद्घाटन श्री रामबहादुर आजाद से कराया। जहाँ सस्ते दर पर ईलाज होता है।
- 2500 मोतियाबिन्द का ऑपरेशन पिछले साल मुफ्त कराया।
- हमारा नारा- रोड, बिजली के साथ शिक्षा एवं रोजगार

चौथी दुनिया
दिल्ली, 01 नवंबर-07 नवंबर 2010

खगड़िया विधानसभा क्षेत्र में जद-यू की निवर्तमान विधायक पूनम देवी यादव की राह इस बार आसान नही है, क्योंकि उनकी जेठानी सुशीला देवी ने उनके ख़िलाफ़ मोर्चा खोल दिया है.

कहीं दरक न जाए एनडीए की ज़मीन

राजेश सिन्हा

नीतीश सरकार की उपलब्धियां गिनाकर वोट पाने की चाहत रखने वाले प्रत्याशियों को इस बार झटका लग सकता है. वजह, जीत के बाद उन्होंने आम जनता से सरोकार रखना भी मुनासिब नहीं समझा, शिलान्यास और उद्घाटन करके मीडिया के सामने बड़ी-बड़ी बातें ज़रूर कीं. एक बार फिर लगभग वही प्रत्याशी चुनावी मैदान में हैं. जनता एक बार फिर उनके भाग्य का फ़ैसला करने के लिए तैयार है. राजनीतिक पंडितों के मुताबिक़, इस बार कई राजनीतिक पार्टी के दिग्गजों की प्रतिष्ठा ख़तरे में है. मतदाताओं की ख़ामोशी से हलकान प्रत्याशी उन्हें लुभाने की भरपूर कोशिशें कर रहे हैं, बावजूद इसके कोई भी प्रत्याशी जीत का दावा नहीं कर पा रहा है. हालांकि चारों विधानसभा क्षेत्रों के सभी 46 प्रत्याशी ताल ज़रूर ठोक रहे हैं. चुनावी बिसात बिछ चुकी है, मोहरे भी सजकर तैयार हैं. खगड़िया विधानसभा क्षेत्र में जद-यू की निवर्तमान विधायक पूनम देवी यादव की राह इस बार आसान नही है, क्योंकि उनकी जेठानी सुशीला देवी ने उनके ख़िलाफ़ मोर्चा खोल दिया है. इतना ही नहीं, नगर परिषद के सोलह वार्ड पार्षदों ने उनके द्वारा लगाए गए आरोपों के विरोध में स्वर बुलंद करके यह स्पष्ट कर दिया कि अगर उन्होंने इसके लिए माफ़ी नहीं मांगी तो ख़ामियाज़ा भुगतने के लिए तैयार रहें. पूनम की जेठानी सुशीला तो इस बार उनके लिए कांटा ही बन गई हैं. वर्षों से समाजसेवा करते आ रहे इंजीनियर धर्मेंद्र भी इस बार पूनम की नैया डुबोने के लिए तैयार बैठे हैं. विजय कुमार पांडव के इर्द-गिर्द ही जीत की तहरीर लिखे जाने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता. पांडव के बड़े भाई एवं कोसी विकास पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष भरत यादव उनके लिए अगर रहबर बन गए तो उनका जीतना लगभग तय है.

परबत्ता विधानसभा क्षेत्र से परिवहन मंत्री रामानंद सिंह जद-यू की ओर से उम्मीदवार हैं. पिछले चुनाव के बाद जनता से कटे रहना उन्हें बेहद भारी पड़ने वाला है. इस बार मतदाताओं का रुझान राकेश कुमार उर्फ़ सम्राट चौधरी के प्रति है. कांग्रेस प्रत्याशी के रूप में चौथम के प्रखंड प्रमुख नरेश प्रसाद बादल मैदान में हैं, लेकिन यहां के मतदाताओं की मानें तो जद-यू और राजद के बीच ही आमने-सामने की टक्कर होगी. लोगों का कहना है कि परिवहन मंत्री बनने के बाद रामानंद घर तक पहुंचने के लिए काले शीशे वाली गाड़ी का प्रयोग करने लगे. इस दौरान वाहन के सामने आने वाले ग़रीब दुकानदारों को उनके सुरक्षा गार्डों ने जमकर धुना. इस बार यहां 1 लाख 27 हज़ार 8 सौ 65 पुरुष और 1 लाख 10 हज़ार 4 सौ 39 महिला मतदाताओं द्वारा कुल 10 उम्मीदवारों के भाग्य का फ़ैसला किया जाएगा.

एक लाख 3 हज़ार एक पुरुष और 91 हज़ार 957 महिला मतदाताओं वाले अलौली (सुरक्षित) विधानसभा क्षेत्र में जद-यू द्वारा रामचंद्र सदा जैसे कमज़ोर प्रत्याशी को उतारना लोगों को हैरान कर रहा है. राजनीतिक पंडितों के मुताबिक़, जिस उम्मीदवार की पहचान ही अलौली में नहीं है, उसे रामविलास पासवान के भाई एवं लोजपा के प्रदेश अध्यक्ष पशुपति कुमार पारस के ख़िलाफ़ उतार कर जद-यू हाईकमान नें दिन में ही तारा देखने का प्रयास किया है. वैसे यह अलग बात है कि जद-यू के बाग़ी उम्मीदवार राजेश कुमार सदा को अंतिम क्षणों में कांग्रेस ने टिकट देकर चुनावी माहौल गरम कर दिया है. हैरत तो तब हुई, जब अमौसी नरसंहार कांड के मुख्य अभियुक्त एवं पूर्व नक्सली सरगना बोढ़न सदा को भाकपा माले ने अलौली से अपना उम्मीदवार बनाकर कोढ़ में खुजली वाला काम कर दिया. फ़ैसला तो आ ही जाएगा, लेकिन अगर नीतीश के विकास कार्यों से प्रभावित मतदाता निवर्तमान विधायकों की कारगुज़ारियों को माफ़ नहीं कर सके तो इस बार खगड़िया की तीन विधानसभा सीटों पर अपना क़ब्ज़ा बरक़रार रखना जद-यू के लिए आसान नहीं होगा.

सत्यनारायण सिंह, सम्राट चौधरी, अनीता बिहारी, नरेश बादल, रामचन्द्र सदा, उमा देवी, सुनीता शर्मा, धर्मेन्द्र, पन्ना लाल पटेल, आर.एन. सिंह, राजेश सदा, संजय यादव, दंगे सिंह, पांडव यादव

तीन देवियों की चुनावी जंग

प्रीति वर्मा

पूनम देवी

सुशीला देवी

खगड़िया विधानसभा क्षेत्र का नतीजा चाहे जो भी हो, लेकिन इस बार देवरानी और जेठानी के बीच होने वाली जंग रोमांचक होगी. खगड़िया के प्रसिद्ध सियासी घराने के पूर्व विधायक रणवीर यादव की पत्नी एवं जद-यू प्रत्याशी पूनम देवी यादव और खगड़िया के दिवंगत सांसद रामशरण यादव की पुत्रवधू एवं ज़िला परिषद अध्यक्ष सुशीला देवी के बीच मुख्य मुक़ाबला होगा, क्योंकि लोजपा प्रमुख रामविलास पासवान ने खगड़िया की निवर्तमान जद-यू विधायक पूनम यादव को सबक सिखाने के इरादे से उनकी जेठानी एवं ज़िला परिषद अध्यक्ष सुशीला देवी को चुनावी समर में उतार दिया है. पूनम इसके पहले लोजपा के टिकट पर खगड़िया से जीत चुकी थीं, लेकिन बाद में लोजपा का दामन छोड़कर जद-यू के पाले में चली गईं. उधर कांग्रेस ने अपना टिकट प्रीति वर्मा को देकर तीन देवियों की जंग का शंखनाद कर दिया है.

प्रशासन के लिए चुनौती

पशुपति पारस

खगड़िया ज़िले के अलौली विधानसभा क्षेत्र में चुनाव कराना ज़िला प्रशासन के लिए टेढ़ी खीर साबित होने वाला है. लगभग पैंतीस सालों से अलौली का प्रतिनिधित्व करने वाले रामविलास पासवान के अनुज एवं लोजपा के प्रदेश अध्यक्ष पशुपति कुमार पारस ने 1973 से इलाक़े में जो चाहा, वही हुआ, लेकिन वर्षों पहले उनके भाई रामचंद्र पासवान के इचरुआ स्थित गेस्ट हाउस को जब नक्सलियों ने बम से उड़ाकर अपनी उपस्थिति का एहसास कराया तो प्रशासन के भी कान खड़े हो गए. प्रशासनिक चहलकदमी बढ़ती गई और नक्सली गतिविधियां भी. इस घटना के बाद प्रशासन ने भी मान लिया कि यह इलाक़ा नक्सल प्रभावित हो गया है. इसी इलाक़े में पिछले साल नक्सलियों ने 16 किसानों की एक साथ हत्या कर दी थी. नक्सल प्रभावित घोषित किए गए खगड़िया ज़िले के इस एकमात्र विधानसभा क्षेत्र में प्रशासन शांतिपूर्वक चुनाव करा पाता है या नहीं, यह सवाल आम जनता के मन में हिलोरें मार रहा है.

कांग्रेस द्वारा खगड़िया से मज़बूत प्रत्याशी न उतारना शायद कोई राजनीतिक रणनीति है, लेकिन प्रीति वर्मा भी चुनावी गणित उलटने में सक्षम हैं. कुल 15 उम्मीदवार खगड़िया विधानसभा क्षेत्र के चुनावी समर में हैं, लेकिन इन चारों के अलावा लोजपा के बाग़ी उम्मीदवार मोहम्मद शहाबुद्दीन भी अप्रत्याशित फ़ैसला लाने में सक्षम हैं. यह कहना शायद बेहतर होगा कि क्षेत्र में चतुष्कोणीय मुक़ाबला दिख रहा है. यहां 15 प्रत्याशियों के भाग्य का फ़ैसला 1 लाख 7 हज़ार 617 पुरुष और 90 हज़ार 9 सौ 42 महिला मतदाताओं द्वारा होगा. बेलदौर विधानसभा क्षेत्र में जद-यू विधायक पन्नालाल पटेल की राह बहुत कठिन है. जनता का आरोप है कि पटेल ने विकास की बात तो दूर, चुनाव के बाद सीधे मुंह बात करना भी मुनासिब नहीं समझा. इस बार निर्दलीय प्रत्याशी विजय कुमार पांडव पन्नालाल पटेल के साथ-साथ लोजपा प्रत्याशी सुनीता शर्मा के लिए भी ग्रह बनकर मैदान में उतरे हैं. भाकपा से पूर्व विधायक सत्य नारायण सिंह मैदान में हैं, लेकिन कांग्रेस प्रत्याशी उमा देवी की मज़बूती का अंदाज़ा उन्हें भी है. अन्य उम्मीदवार भी अपनी-अपनी जीत के लिए तमाम तरह की जुगत भिड़ा रहे हैं. बावजूद इसके यह कहना ज़रूरी है कि इस बार निर्दलीय प्रत्याशी

feedback@chauthiduniya.com